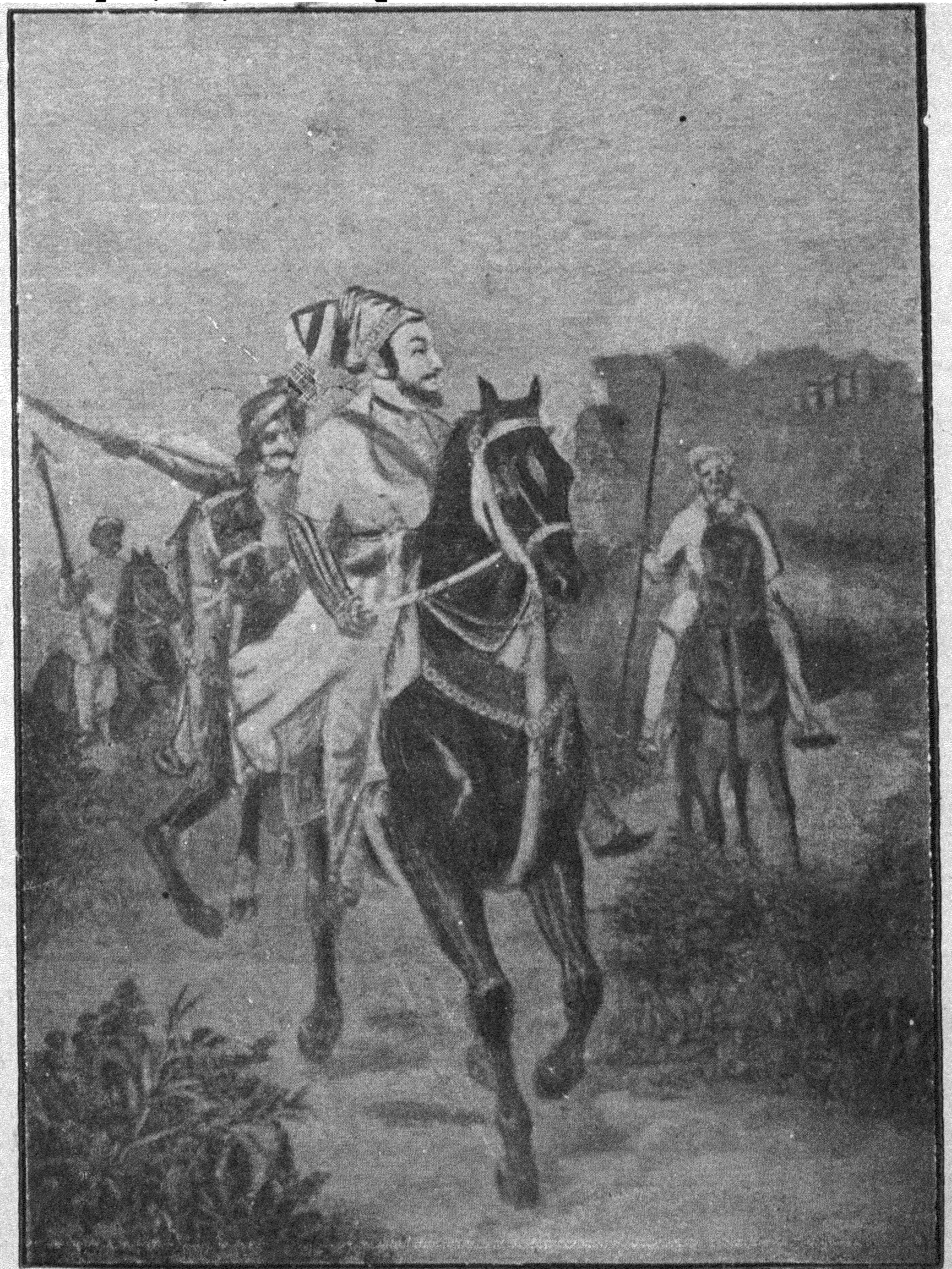
छत्रपति शिवाजी



लेखक—

श्री-लाला लाजपतराय

+ओ३म्+

श्रीमान् ला० लाजपतरायजी कृत

आदर्शवीर

छत्रपति शिवाजी

के

जीवन-चरित्र का हिन्दी अनुवाद

ज्वालादत्त शर्म्मा

द्वारा

अनुवादित

जिसे

प० शंकरदत्त शर्मा ने

शर्ममिशीन प्रिंटिंग प्रेस, मुरादाबाद में

छापकर प्रकाशित किया।

चतुर्थवार १००० | सं० १९८३ | मूल्य १॥=)

❀ ओ३म् ❀

चतुर्थ संस्करण की

भूमिका



देशभक्त महात्माओं के चरित्र पढ़ने से अनेक लाभ होते हैं। शिवाजी के जीवनचरित्र पढ़ने वाले भी अनेक लाभ प्राप्त करेंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं, कि पुस्तक के तीन संस्करण हाथों हाथ निकल चुके हैं यह चौथा संस्करण उत्तमता से शुद्ध छपा है। आशा है ग्राहक इसको देखकर प्रसन्न होंगे। भूमिका रूप में यहाँ कुछ कहने की आवश्यकता नहीं कारण लेखक ने विज्ञप्ति में सब कुछ कह दिया है।

किसरौल
मुरादाबाद
९-३-२६



ज्वालादत्त शर्म्मा

विज्ञप्ति

किसी किसी जाति के लिये इतिहास से अधिक बढ़ कर कोई विषय अध्ययन योग्य नहीं होता और विशेष करके उस जाति के लिये जो उन्नति के उच्चशिखर से लुढ़क कर अवनति के गढ़े में पड़ी हो किन्तु हो अवनति में भी अद्वितीय। पूर्वसमय में जितनी सभ्य जातियाँ थीं, कि जिन में से अब कुछ ही दिखाई देती हैं कोई पूछे कि कहां है अब वह जाति जिसकी सभ्यता के चिह्न काबुल और बेनवा में दिखाई देते हैं तो इतिहास इसका कुछ उत्तर नहीं देता। यदि पूछा जाय कि कहाँ है वह जाति जिसने मिस्र के मीनार बनाये और जिस की सभ्यता मिस्र के खन्दकों और गारों से निकल रही है तो भी कुछ उत्तर नहीं मिलता। कहां हैं वे ईरानिवासी जिन पर कैखुसरो कैकबाद आदि शासन करते थे? प्राचीन समय की सभ्य जातियों में यदि कोई जाति इस समय भी अपनी सभ्यता की रक्षा किये हुए स्वतन्त्र है तो वह चीन है, माना कि उसकी अधोगति की सामग्री भी तैयार दीखती है। यूनान और रूम गिरकर संभल गये। प्राचीन मैक्सिको के निवासियों का कुछ पता नहीं। इसी प्रकार कदाचित् और भी अनेक जातियाँ थीं जिनके खण्डहर भी इस समय दिखाई नहीं देते। और जिन जातियों के कुछ चिह्न मिलते हैं फिर वे स्वयं संसार में दृष्टिगोचर नहीं होतीं। इन जातियों के अति-

रिक एक और जाति थी जो अति सभ्य होकर गिरी, वह समस्त संसार में उस समय शिरोभूषण थी। यह उस समय का ज़िक्र है कि जब वर्त्तमान सभ्य जातियों का पता भी न था, जिसका शास्त्र पूर्ण, जिसकी वाणी अत्यन्त शुद्ध, जिस का धर्म अतिशय पवित्र, जिसकी फिलासफ़ी बड़ी गहरी, जिसका शील महाशीतल जिसकी वीरता अद्वितीय और जिस की राजनीतिक पद्धति, (Political Programme) नितान्त स्वार्थ से शुद्ध था। जहाँ तक इतिहास से ज्ञात होता है यह जाति बहुत प्राचीन है। इतिहासका कोई अङ्क ऐसा नहीं जिस में इसकी सभ्यता और उन्नति का वृत्तान्त लिखा हो।

इस जाति की भाषा से समस्त भाषायें जो इस समय साहित्य की मूर्ति हैं निकलीं। इसी जाति से संसार ने धर्म्म सीखा, इसी जाति से संसार ने विद्या पढ़ी शिल्प सीखा इस के पश्चात् बहुतसी जातियां उत्पन्न हुईं और नष्ट हुईं किन्तु इन सब जातियों की वह दयालु माता अब तक बहुत से परि- वर्त्तनों के होते हुये भी जीवित है, माना कि बहुत ही जीर्ण हो चुकी है। कुछ लोग इस दावे को लचर समझते हैं किन्तु स्मरण रहे हमारा दावा हमारे धार्मिक विश्वास पर निर्भर है और प्रसन्नता है कि पाश्चात्य विद्वानों की जाँच (अनुसंधान) हमारे धार्मिक दावे की पुष्टि करती जाती है। यदि संस्कृत या संस्कृत जैसी अन्य भाषा समस्त एण्डोआर्य्यन की आदि- स्त्री (माता) मानी जा चुकी है जिसमें योरप (Europe) की सब भाषायें और फ़ारिस ज़िन्द पश्तो आदि भी सम्मिलित हैं तब कदाचित वह समय भी आजाए जब शेष अन्य भाषायें भी इसी की सन्तान सिद्ध हो जाएँ। भारत से समस्त मत फैले, यह बात स्वयं संसार के बड़े बड़े मतों की पुस्तकें देखने से स्पष्ट होती है, बौद्धमत जिस के मानने वाले

अधिक मनुष्यों हैं, इस भूमि में उत्पन्न हुआ और यहीं से अन्य देशों को गया, वैदिक धर्म और वैदिक फिलासफ़ी की मुहर उस पर लगी हुई है। ज़रदुश्त का मत भी वैदिक धर्म्म से बहुत कुछ मिलता है, यहां तक कि इस मत की प्रधान धर्म्मपुस्तक में आर्य्य जाति की पवित्र पुस्तकों का ज़िक्र है। ईसाई धर्म की आरम्भिक दशा के निमित्त अनुसन्धान किया गया है उसका मिलान भी इसी ओर है, वह भी इसी भूमि से गया है। डाक्टर हेयर साहिब की सम्मति जो अनुसन्धान पर निर्भर है यदि सत्य है तो वह लिखते हैं कि इस्लाम धर्म के नेताने सबसे पहले सीरिया की धार्मिक सभाओं से धार्मिक वादविवादमें मनोरञ्जकता प्रकट की। कुछ ईसाईयों का यह दावा है कि बौद्ध धर्म और ईसाई धर्म में इतनी समानता है कि बौद्ध धर्म ईसाई धर्म से निकला है परन्तु यह भली प्रकार सिद्ध होचुका कि बौद्धमत आर्यावर्त में उस समय से पहले उत्पन्न हुआ था जब कि संसार को ईसाई धर्म का वहम भी न था। इस लिये यह फल निकलता है कि बौद्ध धर्म्म से ईसाई धर्म ने जन्म ग्रहण किया। संसार की सब से पहली पुस्तक जिसका आज तक पता चलता है हिन्दुओं के पास है, संसार की सब से पुरानी और पूर्ण भाषा जिसका पता चलता है हिंदुओं के पास है। अस्तु। इससे बढ़कर और कौनसे प्रमाण की आवश्यकता है कि यह जाति सबसे प्राचीन जाति है। कदाचित् आर्य्य जाति को सब से प्राचीन होने का गौरव प्राप्त न होता जब तक कि वह इस के साथ यह भी न कह सकते कि उनकी जाति केवल सब से पुरानी ही न थी, प्रत्युत प्राचीन जातियों में सबसे अधिक सभ्य, सबसे अधिक विद्यावाली और धार्मिक जाति थी। इसी जाति ने गणितविद्या का आविष्कार किया और इसी ने

ज्योतिषविद्या को प्रकट किया परन्तु इससे क्या आज वही जाति अधोगति को प्राप्त होरही है।

ऐसी जाति के लिए अपने इतिहास से बढ़कर कोई अवलोकनीय ग्रन्थ नहीं हो सकता। शोक है कि यह जाति इतनी सभ्य थी किन्तु इसके पास कोई श्रेणीबद्ध इतिहास नहीं। कुछ विद्वानों का कथन है कि इसने इतिहास लिखने की ओर ध्यान ही न दिया। कुछ कहते हैं कि इस जाति के पुस्तकालय पोलिटिकल परिवर्तनों में नष्ट होगये। कदाचित् दोनों प्रकार की सम्मतियां किसी किसी अंश में ठीक हों किन्तु यह सब होते हुये भी हिन्दू जाति इतिहास सामग्री और ऐतिहासिक चिह्नों से अपरिचित नहीं है और यदि हिंदू विद्यार्थी अपनी पवित्र भाषा (संस्कृत) को अवलोकन करके इन ऐतिहासिक चिह्नों की ओर ध्यान दें तो कुछ संशय नहीं कि हम अपनी जाति का इतिहास पा सकते हैं। उन्नति के इतिहास के लिये तो हमें संस्कृत का अवलोकन आवश्यक है परंतु अधःपतन की कहानी कहां से मिले ? जब तक हम संस्कृत के पुस्तकालयों का निरीक्षण कर उन्नति का इतिहास लिखें तब तक हमारे भाई क्या करें ? ये दो प्रश्न हैं, जिन्होंने प्राय मुझको और मेरे भाइयों को चिन्ता में डाला है। वास्तव में यह बात है कि आजकल जो इतिहास हिन्दू बालकों को पढ़ाया जाता है वह अत्यन्त अविश्वसनीय और पक्षपात से पूर्ण है। उन्नति के इतिहास की सत्यता के मार्ग में तो वे कठिनाइयां हैं जो अन्य जाति के मनुष्यों को संस्कृत जैसी क्लिष्ट भाषा के अध्ययन में होनी चाहियें। संस्कृत में अनेक परिवर्त्तन हुए और विश्वसनीय अनेक संस्कृत ग्रन्थ नष्ट होगये इसी कारण हमदर्द से हमदर्द लेखक ने भूल की, और उन लोगों का तो कहना ही क्या है जो कि संस्कृत को पढ़ने से

पूर्व ही यह समझ बैठते हैं कि यह एक अशिक्षित जाति की भाषा थी और जिसने कभी किसी प्रकार की उन्नति नहीं की।

उन्नति के इतिहास (अर्थात् हमारे उन्नत समय के इतिहास) के लिए हमारे पास अनेक पाश्चात्य विद्वानों के लेख हैं क्योंकि मुसलमानों ने इसओर बहुत कम ध्यान दिया। इतिहास की खोज करने वालोंमें दो प्रकार के पाश्चात्य विद्वान् हैं।जिनका मैंने ऊपर ज़िक्र किया है। पहले अनुसन्धानकर्त्ता जिन्होंने बिना किसी पक्षपात के उन्नति का इतिहास लिखा है बहुत कम हैं और हमदर्द अनुसन्धानकर्त्ता तो बहुत ही कम हैं। शोक यह है कि इन अन्तिम इतिहास लेखकों की लिखी हुई पुस्तकों तक हमारे विद्यार्थियों की पहुंच बहुत कम है जो कि इतिहास आजकल पढ़ाया जाता है ऐसा दुरंगा है कि उसका सिर पैर नहीं मिलता। कुछ हमारे देशके विद्वानों ने भी देशके प्राचीन इतिहास लिखने की ओर ध्यान दिया है,परन्तु शोक है कि उन्होंने स्वयम् अनुसंधान करनेके बजाय पाश्चात्य विद्वानों की ही सम्मति पर अपना मत निर्धारित कियाहै। निदान हमारा उन्नति का इतिहास अभीतक अधूरा ही पड़ा हुआ है। हिन्दू विद्यार्थियों का धर्म है कि वे इस कमी को पूरा करें। जब तक इतिहास हमारे हाथों से लिखा जाय उस समय तक हमारे लिए आवश्यक है कि वर्त्तमान अनुसंधान पर ही अपनी जाति के नवयुवकोंके लिये ऐसा इतिहास लिखें जिसमें पक्षपातरहित,न्यायप्रिय और बे लगाव लेखकों के परिश्रम के फल भरे हुए हों जिसको पढ़कर हमारे बालक और कुछ नहीं तो उस उच्चशिखर का अनुमान ही लगा सकें जहां से उनके पुरखा गिरे थे।

उन्नति के इतिहास का अवलोकन जितना आवश्यक है उतना ही यह भी ज़रूरी है कि अधोगति के इतिहास की ओर

भी ध्यान दिया जाय, यह इतिहास तो बहुत ही निकृष्ट है। ये इतिहास प्रायः मुसलमानों द्वारा लिखे गये हैं और उनमें स्थल स्थल पर पक्षपात और तरफदारीके प्रमाणमिलते हैंइस में लेखकों का अपराध नहीं, जिन दर्बारों में रहकर वे पारितोषिक पातेथे, जिन लोगोंको प्रसन्न करनेके लिए वे इतिहास लिखे जाते थे, जिस अभिप्राय से वे वृत्तान्त लेखबद्ध किये जाते थे, वे कारण थे जो उनको खुशामद से भरे इतिहास लिखनेके लिए विवश करते थे। स्थल स्थल पर उन इतिहासों में आत्मश्लाघा और पक्षपात के चिह्न मिलते हैं और म्लेच्छों की वीरता, उनकी हिम्मत और विजय के वृत्तांत अत्यन्त ज़ोरदार शब्दों में लिखे गये हैं। जहां कहीं हिन्दुओंने जयभी पाई है वहां उसे चालबाज़ी और अन्यान्य कारणों पर निर्भर किया है। अनेक स्थल पर हिंदुओं को 'सग' (कुत्ता) 'काफिर' तथा भीरु शब्दों से याद किया गया है। कहीं वीर एवं जाति के निमित्त प्राण देने वालों को डाकू लूटेरा बताया गया है निदान जिस प्रकार बना है हिंदुओं की वीरताको भीरुता में परिवर्त्तित किया गया है। मुसलमान लेखकों का क्या अपराध है जब कि वर्तमान समय के पाश्चात्य विद्वान् भी इस दोषसे मुक्त नहीं हैं। योरोपियन जातियों के युद्ध में युद्ध समाचार-संवाददाता अपने अपने देशों को भेजते हैं, वे भी इसी प्रकार अत्युक्तियों और पक्षपात से भरे होते हैं। प्रायः योरोपियन लेखकों ने अर्बी भाषाको अन्यायी एवं अल्ला के वीरों को डाकू शब्द से याद किया है। यदि अंग्रेज जैसी सभ्य जाति उन लोगों को जो अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिये प्राण दें डाकू आदि कहने के दोष से लिप्त हो सकती है तब बेचारे मुसलमान लेखकों का क्या अपराध है। देशप्रिय सज्जनों को दोहरी लड़ाई करनी पड़ती है, प्रथम अपनी जाति और देशके

बाहरी शत्रुओं से और दूसरे अपने ही में देशघातक तथा अन्य प्रकार के शत्रुओं से। संसार में कोई जाति दूसरी जाति के आधीन नहीं हो सकती जब तक कि उस में ट्रेटर (देश घातक) न हों। इन देशघातकों की उपस्थिति देशोद्धारकों के मार्ग में अधिक कठिनाइयां उपस्थित कर देती हैं, विवशतया देश सेवकों को दोहरा काम करना पड़ता है। उनकी सफलता के लिये आवश्यक है, कि वे इन (Traitor) देशघातकोंका बल न बढ़ने दें, जब वे सिर उठावें तभी उन का बल नष्ट करदें। निदान उन को ऐसे घातक लोगों और शत्रुओं को तंग करने के लिये नाना प्रकार के ढंग रचने पड़ते हैं। यदि वे लूटमार भी करते हैं तब इस लिये नहीं कि वे लूटमार के धन से स्वयं धनवान् बनें प्रत्युत इस अभिप्राय से कि अपने शत्रु को बल-हीन करें, उन के सामान को लूट ले जांय और जहां से उनको सामान मिल सकता हो उस स्थान को सामानसे रिक्त करदें। योरोपियन जनरलोंमें इस प्रकारकी कार्य्यवाही सिपाहियोंका कर्त्तव्य या फ़न समझा जाता है लेकिन दूसरों की यही कार्य्य-वाही डाकूपन के नाम से प्रसिद्ध की जाती है, जब कि आज कल की सभ्य जातियों में इस प्रकार की युद्ध-सभ्यता है तब हम मुसलमान लेखकों पर क्या शोक प्रकाश कर सकते हैं।

प्रसंगवश हमको इतना लिखना पड़ा। वास्तव में प्रश्न यह है कि हम अपनी अवनति का इतिहास कहां से पढ़ें क्यों कि हमारे लिये आवश्यक है कि हम उन कारणों पर विचार करें जिनसे हम इस अधोगति को प्राप्त होगये, और विशेषकर उस के बाद के वृत्तान्तों पर भी ध्यान दें जिनके कारण हम इतने समय तक अवनति के गढ़े में पड़े रहे, इस विषय का हमारे लिए खोज निकालना बहुत जरूरी है। दुर्भाग्य से मुसलमानों की लिखी हुई पुस्तकों के अतिरिक्त बहुत कम सामग्री हमारे

पास उपस्थित है. एतत्कालीन इतिहास को समस्त पुस्तक जो हमारे बालकों के हाथ में दी जाती हैं इन्हीं मुसलमानी इतिहासों की नींव पर चुनी गई हैं। इन मुसलमानी इतिहासों में हमें एवं हमारी जाति को अत्यन्त डरपोक सिद्ध करने की चेष्टा की गई है। जहां कहीं हमारी जाति ने विजय भी पाई है उस को भी दगाबाजी और बेईमानी की बदौलत बतलाया है जो भीरुता से भी बढ़ कर है! कुछ योरोपियन विद्वानों ने इस बातको स्पष्टतया खोलकर लिखा है, और हिन्दुओं की वीरता की प्रशंसा की है। कुछ अङ्गरेज लेखकों ने मुसलमानी इतिहास ही को सच समझ कर उस का अनुकरण किया है। किन्तु यह विलक्षणता है कि जहां घर में लगी है वहां तत्काल उन इतिहासों को अविश्वसनीय ठहराने के लिये तैयार हो गये हैं। ग्रांटडिफ़ साहब एक प्रसिद्ध लेखक हैं उन्होंने अनेक महाराष्ट्र जाति का इतिहास लिखा है। उन्हों ने अनेक स्थलों पर उन आक्षेपों को जो मुसलमान लेखकों ने हिन्दुओं पर लगाये थे सच माना है किन्तु जहांपर फरिश्तेका लेखक लिखता है कि 'सन् १८७१ ईसवी में पुर्तगाल निवासियों ने धोके से विजयपुर और अहमदनगर के बादशाहों पर विजय प्राप्तकी और पुर्तगाल निवासियोंने मुसलमान सेना के नायकों को शराब पिला पिला कर उन्मत्त कर दिया', वहां पर मि० ग्रागटडिफ साहब इस से सहमत नहीं हैं और कहते हैं कि प्रायः मुसलमानों ने जब कभी हार मानी है तब ऐसी शकिस्त को दगाबाजी के सिर मढ़ा दिया है। फरिश्ता कितना विश्वसनीय है इस के लिये एक योग्य अङ्गरेज लेखक की यह सम्मति पर्याप्त होनी चाहिये: ख़ाफ़ीख़ां एक और लेखक हुआ है जिस के इतिहास से बहुत सहायता ली जाती है, वह तो प्रायः हमारे बहादुरों को "सग" (कुत्ता) ही

लिखता है। क्या ऐसे आदमियों के लिखे हुए इतिहास हमारे बच्चों को हमारी अवनति का सच्चा इतिहास बतला सकते हैं? शोक कि जो इतिहास आज कल पढ़ाये जाते हैं किसी स्वतन्त्र लेखक के अनुसन्धान द्वारा नहीं लिखे गये हैं और आवश्यकता है कि हिन्दू अपनी अवनति के इतिहासको स्वयं लिखें, सब इतिहास लेखकों की पुस्तकों से सहायता लें और हिन्दुओं की लिखी हुई इतिहास पुस्तकें खोजें यद्यपि मुझको बहुत सन्देह है कि कुछ हिन्दुओं के लिखे हुए इतिहास मुसलमानी इतिहासों से भी गिरे हुये होंगे क्योंकि जो लेखक किसी को प्रसन्न करने के लिये कुछ लिखता है वह कभी सत्य की ओर ध्यान नहीं देता प्रत्युत पारितोषिक की ओर उसकी दृष्टि लगी रहती है, तो भी ऐसे इतिहास मिलेंगे जो किसी इनाम के लोभ से नहीं लिखे गये, इस काम में अंगरेजी इतिहास वेत्ताओं ने हमारे लिये बहुत परिश्रम किया है इसके लिये हम उनके चिरकृतज्ञ हैं। कौन हिंदू है जो टाड साहब के राजस्थान को पढ़कर उनकी विद्वत्ता के लिये कृतज्ञता प्रकाश न करेगा?यदि प्रत्येक राजा महाराजा अपने अपने इलाके का इतिहास टाड साहब के राजस्थान से चुन लें तब आशा है कि हिंदू बालकों को अपने पुरखाओं की वीरता की कहानी पढ़ने को मिल जाय जो वीरता उन्होंने विजय शील जाति के सम्मुख अपनी स्वतन्त्रता को क़ायम रखने के लिये दिखलाई।

दक्षिण में एक और जाति है जो सदैव अध्ययनशील रही और जिसके पास अनेक भागों में अपना और अपनी जाति का इतिहास प्रस्तुत है मेरा संकेत मरहठा जाति की ओर है, मुझे आशा है कि इसी प्रकार हिंदुस्तान के अनेक भागोंमेंअन्य हिंदू जातियों के पास भी अपनी अपनी अवनति के इतिहास

किसी न किसी अंश में मौजूद होंगे यदि इन सबको एकत्र किया जाय तो इस विशाल किंतु गिरी हुई जाति का इतिहास तैयार हो सकता है। आजकल प्रायः यह देखा जाता है कि जिसका जी चाहता है वह हिंदुओं पर बुजदिली का दोष आरोपित कर देता है, हमारे शासक हमको बुजदिल कहें तो हानि नहीं क्योंकि उनका मतलब है, मुसलमान भाई भी यदि हमको बुजदिल बतावें तोभीकुछ हानि नहीं क्योंकि उनको हम पर आक्षेप करना अभीष्ट है किंतु विलक्षणता यह है कि स्वयं हिंदू जाति को अपनी भीरुता का कुछ विश्वास सा होगया है क्योंकि प्रथम तो मकतबों में मुल्लाओं ने, तत्पश्चात् स्कूलों में वर्नाकुलर टीचरों ने यहाँ तक कि कालिजों में भी अङ्गरेजी इतिहासकारों ने हमको यही सिखाया है कि हमारी जाति परोक्ष का विचार करने वाली होने के कारण से कायर रही है, परन्तु परोक्षदर्शिता एवं कायरता पर्यायवाची शब्द नहीं है। यदि अँग्रेज जाति हर्बर्ट स्पेंसर एवं डार्विन आदि फ़िलासफर (दार्शनिक) उत्पन्न करके बहादुर तथा दिलेर रह सकती है; यदि जर्मनी शोपनहावर जैसे फ़िलास्फर उत्पन्न करके सबसे बड़ी लड़ाका जाति संसार में हो सकती है एवं अन्यान्य जातियाँ भी सुकरात अफ़लातून, अरस्तु, कान्ट, हेगल, डनी, शिलर, गोटे, मिल्टन जैसे दार्शनिक और कवि उत्पन्न करने पर भी शूर रह सकती हैं, यदि ईसाई जातियाँ ईसा की इस शिक्षा के होते हुए भी कि यदि कोई तुम्हारे एक गाल पर थप्पड़ लगाए तब दूसरा गाल सामने कर दो, यदि मुसलमान जातियाँ भी सूफियों की अद्वैतवाद की शिक्षा प्रचारित होते हुये और विशेषतः—

"सब काम अपना रखना तक़दीर के हवाले।
हिम्मत जो है तो यह है तदबीर है तो यह है॥"

शूरवीर रह सकती हैं तब हमें कोई कारण नहीं दीखता कि हिन्दू क्यों अपने विज्ञान के हेतु अपनी शूरता खो बैठे ? यह तो केवल हेत्वाभास है। वह इतिहास जिसके विश्वसनीय होने के वृत्तान्त मैंने ऊपर बतलाये क्या साक्षी देता है? विपक्षी की साक्षी जितनी हमारे (हक़) में हो उतनी ही सबसे उत्तम साक्षी है जो हमारे लिये लाभदायक होसकती है क्योंकि उस पर हमारे पक्षपाती होने का आक्षेप नहीं हो सकता। जो जाति गिरे हुये दिनों में भी राजा कर्ण, भूरावादल राणा सिंगा, प्रताप, जयमलफत्ता दुर्गादास शिवाजी, गुरु अर्जुन, गुरु तेगबहादुर, गुरुगोविन्दसिंह, नलुआ, फूलासिंह आदि २ सहस्रों शूरवीर उत्पन्न कर सकती है वह जाति कभी कायर कहलाने योग्य नहीं, जिस देश की स्त्रियों ने आरम्भ काल से आज तक अनेक अवसरों पर केवल उत्तमोत्तम उदाहरण ही नहीं दिखलाये किन्तु जाति का महत्व दिखलाकर हिन्दू जाति की वीरता का परिचय दिया है, सैकड़ों ने अपने हाथों से अपने पति, बान्धव और पुत्रों की कमर में शस्त्र बाँधे और आँखों के सम्मुख उनको युद्धक्षेत्र में काल का ग्रास बनता हुआ देखा किन्तु उन वीर रमणियों की आँखों से अश्रुपात नहीं हुआ। अनेक वीर वनिता स्वयं पुरुषों का वेष धारण कर अपने धर्म और जाति की रक्षा के निमित्त युद्धक्षेत्र में लड़कर सफल मनोरथ हुईं और लाखों ने अपने पातिव्रत धर्म की रक्षा के लिए दहकती हुई प्रचण्ड अग्नि में प्रवेश किया।

हिन्दुओं की अवनत दशा का इतिहास भी उनकी धर्म-पवित्रता एवं शूरता का पर्याप्त प्रमाण है। इसमें संदेह नहीं कि इस जाति ने इस समय अनेक कायर देशघातक, जाति के शत्रु, अधर्मी, विश्वासघाती उत्पन्न किये जिन्होंने अनेकवार धर्म और जाति को शत्रुओं के हाथ बेचा किंतु ऐसी दशा में

इसे अधर्म की मँझधार में ऐसी विपत्तियों मे इस्लामी तल वार के नीचे भी यदि हमारी जाति इस प्रकार शूरवीर उत्पन्न करती रही और अधिकतया अपने धर्म कर्म पर स्थित है तब यह सबसे बड़ा प्रमाण इसकी शूरता का है जिसकीउपमा संसार में दृष्टिगोचर नहीं होती। क्या कोई दूसरी जाति भी मुसलमानो के धार्मिक जोश, उनकी वीरता, उनकी हिम्मत और उनकी तलवार के सम्मुख ठहर सकती थी? एक सहस्त्र वर्ष पर्य्यन्त ऐसे कठोर शासकों के शासनकाल में रहते हुए भी आज २० करोड़ हिंदू अपने बाप दादा के धर्म पर स्थित हैं, मुसलमानी आबादी का बहुत बड़ा भाग भी उन्हीं हिंदुओं की संतान हैं जो तलवार के जोर से या और किसी प्रकार के लाभ से या अपनी अनिष्ट इच्छा पूरी करने के लिये मुसलमान बनाया गया था। हिंदुओं की शूरता या कायरता के निमित्त कुछ सम्मति स्थिर करनी हो तो हिन्दोस्तान और योरोपीय टर्की के इतिहास का मुकाबिला करना चाहिये, इतनी और ऐसी जबरदस्त लड़ाका शक्तियाँ जिनसे संसार काँपता है, अपनी सहधर्मिणी ईसाई प्रजाकी सहायता के लिए तय्यार है और चिरकाल से उनकी सहायता कर रही है परन्तु फिर भी आज हज़ार वर्ष से ऊपर हुए. एशिया तक और योरोपियन टर्की के ईसाई तक तुर्कों के पंजे से नहीं निकले। सौ वर्ष पहिले समस्त एशियाई और यूरोपियन टर्की में कोई भाग भी ईसाई आबादी का ऐसा न था जो स्वतन्त्र हो सैंकड़ों वर्षों तक टर्की में कोई स्वतन्त्र ईसाई राज्य दिखाई नहीं दिया था, निस्सन्देह उन्नीसवीं शताब्दी में अन्य योरोपियन शक्तियों की सहायता से कुछ टर्की के हिस्से स्वतन्त्र हो गये, किंतु फिर भी हमें टर्की के ठीक मध्य में कभी कोई स्वतन्त्र ईसाई राज्य दिखाई नहीं दिया, यह दृश्य हिंदोस्तान

में भी दिखाई देता रहा कि कठोर से कठोर शक्तिशाली से शक्तिशाली मुसलमान बादशाह के शासन काल में भी कभी समस्त हिन्दू मुसलमानों की प्रजा नहीं हुए। ठीक मुसलमानी राज्य के उन्नत काल में भी हिन्दोस्तान के मध्य में, उत्तर में, पश्चिम में, स्वतन्त्र राज्य मौजूद रहे हैं जिन्होंने इसलामी शमशेर के सम्मुख अपनी स्वतन्त्रता को सुरक्षित रक्खा है।

यह बात तो मुसलमानी इतिहासों से भी स्पष्टतया सिद्ध है कि आरम्भिक मुसलमानों को अपने पहले ही हमलों में मालूम हो गया था कि उन का मुकाबला एक जबरदस्त जाति से है, यद्यपि आपस की फूट और धर्म की हानि हो जाने के कारण. हिन्दू एक सूत्र में नहीं थे जो उन हमला करने वालों को नीचा दिखाते, तथापि ग्यारहवीं शताब्दी के अन्ततक मुसलमान लुटेरों की तरह देश में आते और माल असबाब लूट कर चले जाते थे। महमूद गजनवी के समय में कुछ ही किलों में मुसलमान अधिपति थे, और वेभी कई बार छीन गये थे। सब से पहला हमला करने वाला जिसने हिन्दुओंकी स्वतन्त्रताका नाश किया, मुसलमानी राज्य की हिन्दोस्तान में नीव डाली, शहाबुद्दीन गोरी था और सब से पहला मुसलमान बादशाह जो देहली के सिंहासन पर बैठा वह कुतुबुद्दीन ऐबक था जो गुलामों के खान्दान का पहिला बादशाह हुआ है गुलामी खान्दानका समय १२०५ या १२०६ ई० से है।

बारहवीं शताब्दी से लेकर सोलहवीं शताब्दी के कुछ भाग तक जब अकबर देहली के तख्त पर बैठा असंख्य हिन्दू राजा स्वतन्त्र थे, हिन्दोस्तान के नक़शे में राजपूताना एक बहुत विशाल इलाका है जो पहले इस से भी अधिक था जितना कि अब है। सबसे पहला मुसलमान बादशाह जिसने राजपूताने पर प्रथम बार आक्रमण किया शहाबुद्दीन खिलजी

था; जो १२७४में देहलीके तख्तपर बैठा, और जिसने चौदहवीं शताब्दी के आरम्भ में चित्तौड़ वंशपर आक्रमण किया परन्तु बादशाह के लौटते ही चित्तौड़ फिर स्वतन्त्र होगया, और इस के पश्चात् अकबर से पहले किसी बादशाह का यह साहस न हुआ। कि चित्तौड़ की ओर दृक्पात करे, अकबर के साथ युद्ध करनेमें महाराणाप्रतापने जो वीरता दिखाई वह समस्त संसार जानता है, प्रताप को जैसी हार हुई ईश्वर ऐसी हार प्रत्येक वीर को प्रदान करे, कौन हिन्दू है जो राणा प्रताप की वीरताके वृत्तान्त पढ़कर गौरव नहीं करता होगा। भाग्यवश राणासिंगा अपने ही एक सेनाध्यक्ष के कारण बाबर के मुकाबले में अशक्त रहा, वरन् कुछ असम्भव न था कि मुसलमान राज्य की उसी समय इतिश्री होगई होती, विधि के विधान में किसी को शक्ति नहीं, जो हेरफेर कर सके। राणासिंगा की पराजय ने देहली के सिंहासन पर मुगल खान्दान वालों को ला बिठाया, इधर यह मुगल वंश धारियोंके राज्य का आरम्भ हुआ उधर पंजाब देश में एक भक्तने जन्म लिया जिसके धर्मोपदेशकों ने पंजाब में एक ऐसा बलवान् पक्ष उत्पन्न कर दिया जिसने मुगल वंश नष्ट करने में एक बहुत बड़ा भाग लिया। बाबरने मुगलवंश के राज्यकी नींव डाली, और उसके शासनकाल में * बाबा नानक ने हिन्दुओं के धार्मिक विषयों में कुछ परिवर्त्तन किया, जिसका फल गुरु गोविन्दसिंह और उनके मतानुयायी वीर हुये। अन्यान्य राजपूत जातियां भी अकबरसे पहले पूर्णतया परतन्त्र नहीं हुई थीं, परन्तु राजपूताना ही देश का इतना बड़ा खण्ड नहीं था जो मुसलमानी राज्य के आरम्भ होने के बाद भी बहुत दिनों तक बल्कि ३०० या ३५०

* इन का विशेष वृत्तान्त "सिक्खों के दश गुरु" नामक पुस्तक म वैदिक पुस्तकालय मुरादाबाद से मुगा कर पढ़ें।

वर्ष तक प्रायः स्वतन्त्र रहा, प्रत्युत उधर एक और बड़ा देश का भाग था जो ४०० मील चौड़ा और प्रायः ३०० से ४०० मील तक लम्बा था, जो चौदहवीं शताब्दी के अन्त तक स्वतन्त्र रहा और किसी म्लेच्छ को उस ओर मुँह करने का साहस नहीं हुआ, यह इलाका, उड़ीसा का था। इसके अतिरिक्त चौदहवीं शताब्दी के प्रारम्भिक काल तक दक्षिण का पश्चिमी भाग बिल्कुल स्वतन्त्र रहा है।

तेरहवीं शताब्दी में सब से पहले अलाउद्दीन ख़िलजी ने दक्षिणपर आक्रमण किया। अलाउद्दीन पहला मुसलमान जनरल था जिसने नर्मदा को पार किया और खानदेश होकर देवगढ़ के द्वारों पर आ निकला, उस समय अलाउद्दीन का चचा जलालुद्दीन ख़िलजी देहली के तख्त पर विराजमान था, अलाउद्दीन ने यह प्रसिद्ध कर दिया कि वह चचा से क्रुद्ध होकर पनाह लेने के लिये दक्षिण को जाता है किन्तु मन में इसने भ्रमण की ठान ली थी।

दक्षिण के सब से बड़े राज्य की राजधानी देवगढ़ था। देवगढ़ का राजा रामदेवराव जो कि प्राचीन राजवंश का प्रतिनिधि था बेसुध बैठा हुआ था, उसकी सब सेना बाहर गई हुई थी यहाँ तक कि उसकी स्त्री और पुत्र भी यात्रा के लिये बाहर गये हुये थे, राजा को जब समाचार मिला कि अलाउद्दीन ने राजधानी को घेर लिया तब बेचारे ने निज के नौकर एकत्र करके बचाव करना आरम्भ किया परन्तु इन बेचारे नौकरों की क्या शक्ति थी जो इन लड़ाकू मुसलमानों का मुक़ाबला कर सकते, लाचार कुछ सामग्री एकत्र कर के पहाड़ी किले में जा घुसे। अलाउद्दीन तत्काल शहर में घुस आया और खूब लूटमार करके किले को घेरने के काम में लग

गया और साथ ही यह प्रसिद्ध कर दिया कि अलाउद्दीन के पास तो सेना का एक थोड़ासा ही भाग है, बादशाह सेना सहित पीछे आरहे हैं, जिस समय राजा को यह समाचार मिला उसने संधि करना ही ठीक समझा। सन्धि की बातचीत हो रही थी कि राजा का बेटा इस आक्रमण की सुध पाकर कुछ समूह के साथ नगर के बाहर आ उपस्थित हुआ और कायरता से बिना दो हाथ किये पराधीन होजाना लज्जा की बात समझकर युद्ध के लिये कटिबद्ध होगया और अलाउद्दीन को चेलेंज दिया। अलाउद्दीन इस अवसर पर एक और चाल चला, सेना का अधिकतर भाग लेकर तो राजकुमार के सम्मुख आ डटा और कुछ हिस्सा पीछे छोड़ आया कि वह कुमार दृष्टि रक्खे और यदि आवश्यकता हो तो ठीक मौके पर में युद्धक्षेत्र में आपड़े, जिससे कि लोगों को यह धोका होजाय कि बादशाह स्वयं आगये, अलाउद्दीन की यह युक्ति उसके लिये बड़ी लाभदायक प्रतीत हुई, और राजकुमार खूब वीरता से लड़ा, जब मुसलमानों के पराजित होने का समय निकट आया तब सेना का वह भाग जो किले के करीब था, आपड़ा और हिन्दुओं ने यह समझा, कि बादशाही मदद आगई, मुसलमानों का विधाता दाहिने था, राजपुत्र की वीरता कुछ काम न आई और मुसलमानों ने जय लाभ की, दुर्भाग्य इसीकहते हैं कि रसद की सामग्री जो किले में पहुँची थी उसमें गेहूं के आटे की बजाय नमक के बोरे डाल दिये गये थे। इस दुर्भाग्य का क्या उपाय था।

विवशतया राजा ने बहुतसा धन और कुछ इलाका मुसलमानों को भेंट करके उनको प्रसन्न किया, इसके पश्चात् अलाउद्दीन खिलजी के शासनकाल में स्वयम् बादशाह ने तीन बार दक्षिण पर आक्रमण किया और बहुत लूटमार करता

रहा अन्त में जब देहली का राज्य सिंहासन स्वयम् संकट में पड़ गया तब दक्षिण के हिन्दू स्वतन्त्र हो गये और दक्षिण में देवगढ़ के किले के आंतरिक और कोई भाग दक्षिण भूमि का मुसलमानों के अधिकार में नहीं रहा, इस अवसर पर हिंदुओं की शक्ति दक्षिण में इतनी बढ़गई कि उन्होंने देवगढ़ के किले को घेर लिया, जिस पर शहंशाह अपनी सेना सहित देवगढ़ को बचाने के लिये स्वयम् गया। दिनराव, जो हिन्दू राजाओं में एक नामी रईस था पकड़ा गया, मुसलमानों ने अपनी मामूली कृपा से उस को ज़िन्दा ही दीवार में चिनवा दिया। सन् १३१३ ई० तक फिर दक्षिण में शान्ति रही। अन्ततः शहंशाह मुहम्मदशाह तुग़लक फिर अपने दल सहित उनपर चढ़ा और समस्त दक्षिण में लूटमार मचादी हिन्दू राजधानी तिलंगाना नितान्त उजड़ गई, लोगों ने मुसलमानी प्रजा बनने की बजाय देश निकाला स्वीकार किया, इस वर्ष के पश्चात् तिलंगाना के लोगों ने फिर एक नगर बसाया, जिसका नाम विजयनगर रक्खा। बाद को यह शहर एक शक्तिशाली हिन्दू की राजधानी बना। बहुत दिनों तक यह राजधानी मुसलमानों से नितान्त स्वतन्त्र रही यहां तक कि सन् १५६४ ई० में प्रायः २०० वर्ष बाद दक्षिण के समस्त मुसलमानी राज्यों ने विजयपुर गोलकुण्ड, (अहमदनगर आदि) पर ऐक्यभाव से आक्रमण किया और तालिकोट की प्रसिद्ध लड़ाई में हिन्दू राज्य को छिन्न भिन्न कर दिया, न केवल विजयनगर का बल तोड़ दिया बल्कि उसका कुछ राज्य भी ले लिया। इस समय तक समस्त कर्नाटक और हिन्दोस्थान का पश्चिमीय भाग पूर्णतया हिंदुओं के अधिकार में था, केवल दक्षिण के उत्तर भागमें मुसलमानों का ज़ोर था, अकबर के राज्याभिषेक से लेकर १७वीं शताब्दी तक जो प्रायः १५० वर्ष का समय होता है मुसलमानी राज्य

को सब से अधिक उन्नति हुई। अकबर सब से पहिला मुसलमान बादशाह था (यदि उस को मुसलमान कह सकते हैं) जिसने समस्त हिन्दुस्तान की बादशाही का ध्यान किया और अपनी बुद्धिमानी से यह फल निकाल लिया कि बिना हिंदुओं की सहायता और दिलजोई के इस विचार का पूर्ण होना असम्भव है। यद्यपि उस ने धार्मिक पक्षपात को छोड़कर उन युक्तियों से हिन्दुओं को जीता जो युक्तियाँ किसी पराजित जाति को गुलाम रखने के लिये सबसे अधिक दृढ़ होती हैं। जीती हुई जाति के लिये ये युक्तियां अपने राज्य को सुदृढ़ करने वाली हैं, पराजित जाति को इन बंधनों से निकलना असम्भव नहीं तो दुस्साध्य अवश्य है। अकबर जैसे धीर राजा ही का काम था जो प्रेम से सब को जीत लिया। कोई इतिहास ले लीजिये चाहे किसी लेखक का लिखा हो इसमें कुछ सन्देह नहीं कि मुसलमान राज्य की उन्नति हिंदुओं की दिलजोई और अधिकतर हिंदू तलवार की सहायता से हुई। अकबर की लड़ाइयों में राजपूत शूरवीरों ने बहुत बड़ा हिस्सा लिया। अकबर बड़ी बड़ी लड़ाइयों में हिन्दू जनरलों से काम लेता था। बीरबल मुसलमान जातियों से लड़ता हुआ मारा गया। अकबर के समयमें राजपूतोंने काबुल को विजय किया। कुछ समय तक अकबर की तरफ़ से प्रतिनिधि स्वरूप एक राजपूत ही काबुलका अध्यक्ष रहा इसीप्रकार अकबर की अन्यान्य चढ़ाइयों में भी राजपूतों ने बहुत सहायता दी और उसके समयमें कई सूबे राजपूतों के आधीन रहे।

अकबर के पश्चात् जहाँगीर ने भी यही नियम रक्खा। शाहजहां को स्वयं हिन्दुओं की सहायता से राजसिंहासन मिला और यद्यपि उसने अपने दादा की पालसी को बहुत कम बादल परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि शाहजहाँ के समय

में इसलामी पक्षपात के चिह्न उत्पन्न हो गये थे। इन बादशाहोंके दर्बार में राजपूत सर्दारों का बड़ा अधिकार था और कोई उनका अपमान नहीं करसकता था। शाहजहां के समय में महावतखाँ सब से बड़ा मुसलमान रईस था क्योंकि वह बादशाह का सम्बन्धी भी था, उसने एक बार राजा अमरसिंह राठौर का अपमान करना चाहा था, अभिमानी और दिलचले राठौरने दर्बार ही में बादशाह के समक्ष महावतखाँ का सिर धड़ से अलग कर दिया। बादशाह को भी डर के मारे हर्मसरा को भागना पड़ा। औरंगज़ेब ने अपने बाप को कैद करके और अपने भाइयों के रक्त से हाथ रङ्ग कर फिर मुसलमानी तास्सुब को जगाया, जिसका यह फल हुआ कि हिन्दुओं ने उसको उम्र भर चैन से नहीं बैठने दिया। चारों ओर हिन्दू जाति ने सिर उठाना आरम्भ किया। औरङ्गज़ेब से लेकर गदर के समय तक मुगलवंश का इतिहास हिन्दुओं की पोलीटिकल उन्नति का इतिहास है और योरोपियन शक्तियों के ज़ोर पकड़ने का।

हिन्दुस्तान के पश्चिम भागमें भी यही नकशा खिंचा रहा। हम कह चुके हैं कि तेरहवीं शताब्दी के अन्त में पहले पहल मुसलमानों ने विन्ध्याचल के पश्चिम ओर कदम रक्खे, मुहम्मदशाह तुगलक वह बादशाह था, कि जिस के मन में यह ध्यान समाया था कि देहली को उजाड़ कर दौलताबाद जो देवगढ़ के नाम से दक्षिण की राजधानी थी बसाये। इस शहंशाह के समय में बहुत सी बगावतें हुईं, मुसलमान अफ्सर स्वयं बाग़ी होगये यहाँ तककि दक्षिण में समस्त हिंदू मुसलमानों ने इत्तफ़ाक करके षड़यन्त्र रचा और उस की राजधानी दौलताबाद को उससे छीन लिया। इन बाग़ियों ने अपनी रक्षा के लिये एक व्यक्ति ज़ाफ़रखाँ नामी को जो कि

किसी समय में एक ब्राह्मण का सेवक रह चुका था और जिसने उस ब्राह्मण की बदौलत बहुत उन्नति की थी नियत कर लिया था। यह व्यक्ति (जाफ़रखाँ) दक्षिण के बाहमनी राज्य का अधिपति हुआ, इसने अपने स्वामी के स्मारक चिह्न स्वरूप अपने वंश का नाम बाहमनी रक्खा और ख़ज़ाने का प्रबन्ध भी उसी के अधीन रक्खा। बाहमनी वंश ने हिन्दुओं के साथ प्रायः अच्छा बर्ताव रक्खा। उस के समस्त पहाड़ी क़िलों में हिंदू सेना रहती थी, आर्थिक प्रबन्ध भी हिंदुओं के हाथ में था, हिंदुओं को सेना में बड़े बड़े पद दिये जाते थे और उनपर बहुत विश्वास किया जाता था। जब कभी किसी बादशाह ने जुल्म किया तभी हिन्दुओं ने सिर उठाया। जब सुल्तान अलाउद्दीन (द्वितीय) के सिपहासालार ने सिर्के के राजा को पराजित कर उस को मुसलमानी धर्म ग्रहण करने के लिए विवश किया तब वहाँ के हिंदुओं ने मुसलमानी धर्म ग्रहण करने की बजाय प्राण छोड़ने पर कमर बांधी और मुसलमान जनरल को उसके ७००० साथियों सहित वध करके अपने धर्म की रक्षा की। उसी समय से बाहमनी राज्य का पतन आरम्भ होगया, इस बाहमनी राज्य के खण्डहरों पर चार पाँच और मुसलमानी राज्य स्थापित हुए। बीजापुर गोलकुण्ड बहरार और बेदर, कुछ समय बाद तीन राज्य रह गये, अर्थात् बीजापुर, गोलकुण्ड और अहमदनगर। बीजापुर का राज्य आदिलशाही के नाम से प्रसिद्ध है, और अहमदनगर का निज़ामशाही से। इस निज़ामशाही राज्यका प्रारम्भ भी एक हिन्दू के हाथ से हुआ। इस वंश का कर्त्ता एक अहमदनामी व्यक्ति था जिसका बाप ब्राह्मण था और बीजापुर में रहता था। बेचारा बाप एक बार लड़ाई में बीजापुर वालों के हाथ पड़गया। फिर क्या था मुसलमान बना लिया गया।

मुसलमान बनकर इन को बड़ा ऐश्वर्य मिला, यहां तक कि बीजापुरकी रियासत का सबसे बड़ा पद भी इसे मिला, उसके बेटे अहमद ने बीजापुर के बादशाह से बगावत करके एक और रियासत बनाई और अपनी राजधानी का नाम अहमद-नगर रक्खा। बीजापुर और अहमदनगर की पालसी प्रायः अकबर के समान थी। दोनों रियासतों का सारा प्रबन्ध हिन्दुओं के हाथ में रहा। पहाड़ी किले हिन्दुओं के हाथ में रहे और वैसे भी हिन्दुओं को बहुत विश्वसनीय समझा गया और बड़े बड़े पद उन को दिये गये। आदिलशाही के वंशधरों के राज्यकाल में एक हिन्दू रईस बारह हज़ारी के पद पर नियुक्त हुआ और इन्हीं वंशधारियों ने पहले पहल यह आज्ञा दी कि सरकारी दफ्तरों में फ़ारसी के बजाय मर-हटी भाषा लिखी जाय अर्थात् उसी दिन से समस्त सरकारी दफ्तर मरहटी भाषा में हो गये। इस राज्य में बराबर हिन्दुओं का ज़ोर रहा। निज़ामशाही खान्दान भी प्रथम अपनी इस नीति का अवलम्बन करता रहा और हिन्दुओं की प्रतिष्ठा करता रहा। बुरहान बादशाह (द्वितीय) ने अपने शासन काल में अपने प्रधान मन्त्री कुंवरसेन को पेशवा का खिताब दिया परन्तु बाद को इस वंश के बादशाहों ने शिया और सुन्नी धर्म के विषयों पर ज़ोर डाल कर अपने राज्य का नाश कर लिया। गोलकुण्ड की रियासत में भी हिन्दू नौकर रहे। इन के अतिरिक्त इस समय एक बलशाली राज्य विजय-नगर का था जो कभी किसी और कभी किसी मुसलमान से लड़ता रहा। अन्ततः सब मुसलमान रियासतों ने एकत्र होकर जैसा कि मैं पहले लिख चुका हूं इस राज्य को परा-जित किया।

इस समय दक्षिण में एक और जाति वीरता में नाम पैदा कर रही थी जिस को फरिश्ता अपनी भाषा में बर्गी कहता है। स्वयं फरिश्ते के इतिहास से ज्ञात होता है कि यह जाति मुसलमानों को प्रायः दिक करती रही। कई बार तो म्लेच्छों ने केवल हिन्दू देशघातकों की सहायता से इन को हराया। सन् १५७८ में एक ऐसी ही घटना हुई।

साल भर की चेष्टा के उपरान्त बादशाह का सेनाध्यक्ष यह रिपोर्ट लिख चुका था कि इन लोगों (बर्गी) का काबू करना असम्भव है। परन्तु अन्त में एक विश्वासघाती देश शत्रु व्यक्ति के द्वारा उन को कूटनीति से हराया। जो काम तलवार से असम्भव था वह फरेब से किया गया। निदान इसी प्रकार दक्षिण में खिचड़ी पकती रही। मुगल वंशधारी, हिन्दु राजपूतों की सहायता से दक्षिण पर चढ़े। इन आक्रमणों को सब से अधिक भयङ्कर औरङ्गजेब ने बनाया, मानो ठीक उसी समय जब कि इस्लामी झण्डे ने प्रायः समस्त हिन्दोस्तान में हलचल डाल रक्खी थी दक्षिण और पंजाब में दो जबर्दस्त शक्तियां उत्पन्न हो रही थीं। अन्ततः मुसलमानी शक्ति की अन्त्येष्टि हुई। इन दोनों शक्तियों के भीतर धार्मिक सुधार काम कर रहा था।

पञ्जाब में बाबा नानक ने हिन्दुओं को बतलाया कि अब वे जाति के विचार को छोड़ सब काम एक ईश्वर के भरोसे पर करें, इस शिक्षा ने हिन्दुओं की धार्मिक अवस्था पर बड़ा प्रभाव डाला, क्योंकि वह समय के अनुकूल थी इस कारण जहां हिन्दू मजबूत बने वहां मुसलमानों का कट्टरपन भी बहुत ढीला पड़ गया। इस मत के अनुयायियों ने पवित्रात्मा बाबा नानक के मिशन को बराबर जारी रक्खा, यहां तक कि वह प्रति दिन मजबूत होता गया और उस ने हिन्दुओं के चित्त

पर विजय प्राप्त की। जब मुसलमान अफसरों ने देखा कि यह मत बराबर फैलता जाता है और लोग इनसे प्रेम करते हैं तब उन्होंने इन को सताना आरम्भ किया यहाँ तक कि केवल उपासना और भक्ति से काम चलता न देख कर सिक्ख गुरुओं ने अपनी रक्षा के लिए तलवार उठाई। सिक्खों का तलवार छूना था कि मुसलमानों का रक्त उबल उठा और वे कपड़ों से बाहर होगये, सिक्खों को सताया जाने लगा, यहाँतक कि कुछ सिक्खों के गुरु बड़ी बुरी तरह से मारे गये। किंतु जो चिन-गारी सुलग चुकी थी वह इन बातों से बुझने वाली न थी, प्रत्युत प्रतिदिन प्रचण्ड होती जाती थी। गुरु अर्जुन ने बड़ी बड़ी कठनाइयां झेलीं, परन्तु अपना धर्म त्यागना स्वी-कार न किया। मनीसिंह जी आदि अनेक सिक्ख हुए हैं जिन को धर्म की खातिर अगणित दुःख पहुंचाये गये जो उन्होंने हंसते खेलते सहन कर लिये।

निदान गुरु तेगबहादुर की बलि ने इस चिनगारी को प्रचण्ड भीषण रूप धारण करा दिया। उनके प्यारे पुत्रों ने जिन्होंने स्वयं अपने पूज्यपाद पिताको जाति और धर्मके लिए सिर भेंट करने का संकेत किया अपने जीवन को यज्ञ से आरम्भ किया और धर्म की जलती हुई लाट को सम्मुख रख कर उस के गिर्द चक्कर लिये। कौन नहीं जानता कि इनका समस्त जीवन इस धर्म यज्ञ में ही व्यतीत हुआ, जो यज्ञ उन के पिता के बलिदान से आरम्भ हुआ था उस यज्ञ में उन्होंने अपने चारों बेटों की आहुति दी, गुरु गोविंदसिंह जी ने भक्ति और प्रेम का प्याला पीकर तलवार हाथ में ली और ऐसी घुमाई कि बिजली का काम करने लगी, उस तलवार ने वह जौहर दिखाये कि मानो स्वयं परमात्मा ने अपने हाथ से उस तलवार को बनाया था।

सिक्खधर्म जो काम पंजाब में कर रहा था वही काम अनेक रूप से दक्षिण में और विशेषकर उस भाग के निकट जहां स्वा० दयानन्द सरस्वती ने जन्म ग्रहण किया था अर्थात् महाराष्ट्र में हो रहा था। पंजाब में जो काम गुरु नानक जी और उनके बाद के अन्य गुरुओं ने किया वही काम दक्षिण में, तुकाराम, रामदास, एकनाथ और जयनाथ स्वामी ने किया। लोगों को छूतपात के बंधनों को हलका कर देने की आज्ञा दी और सच्ची भक्ति और प्रेम का बीज बोया। सच्ची भक्ति और प्रेम अर्थात् धर्मात्मा पिता की पवित्र मृत देह को सम्मुख रख कर गुरु गोविन्दसिंह ने ऐसे समय में जब कि वह पूरी तौर पर बालिग भी नहीं हुए थे शपथ की कि बाप को मारने वालों से पिता के खून का बदला लूंगा। न केवल बदला ही लूंगा। बल्कि इस धर्म भूमि को उनके महान् कलंकित राज्य से मुक्त करने के लिये कोई तदबीर बाकी न रक्खूंगा। बाप दादा के धर्म की रक्षा में शरीर की कुछ पर्वाह न करूंगा।

लोगों के चित्तों में देशभक्ति और जातिसेवा की अग्नि उत्पन्न हुई। ज्योंही कि मुगल बादशाहों की सेनाओं ने दक्षिण की मुसलमानी रियासतों का नाश किया और औरंगज़ेब के पक्षपात और कट्टरपन का चित्र लोगों के सम्मुख रखा गया, हिन्दुओं ने सोचा कि मुसलमानी बादशाहत के यह अर्थ हैं कि कोई हिंदू अपनी धार्मिक रीति को पूरा न कर सके, अनेक प्रकार से हिन्दुओं के धर्म को भ्रष्ट करने के अतिरिक्त हिंदुओं को बेतरह सताया जायगा। हिंदू कवि और भाटों ने इन्हीं विचारों को कविता के रूप में लोगों में फैलाना आरम्भ किया, सच्चे प्रेम और सच्ची भक्ति के विचारों के साथ २ आने वाली इस दुःखमयी अवस्था का चित्र खींचा, ये भजन और शेर लोगों में फैलने लगे, यहाँ तक कि समस्त देश इस

सेवा के लिये प्रस्तुत हो गया था जो कि शिवा जी के हाथों से हुई।

जब हिन्दुओं ने देखा, कि एक परमात्मा की उपासना और सच्ची भक्ति भी मुसलमानों के हाथ से सुरक्षित नहीं रह सकती तब उनके मनों में एक असाधारण धार्मिक लहर जोश मारने लगी जिस के सम्मुख मुगल बादशाहों की तलवार भी कांपती ही दिखाई दी।

शिवाजी और गुरुगोविंदसिंह जी के वृत्तान्त को लिखते समय बड़ा अन्याय होगा यदि हम एक शूरवीर की सेवा को भूल जाँय और मुगलवंशधारियों के अधःपतन में जो भाग उसने या उसके अन्य कुटुम्बियोंने लिया उसे बिलकुल भुलावें। हम ऊपर कह चुके हैं कि रानासिंह की रियासत राना प्रताप के कन्धों पर पड़ी, माना कि अकबर की शाहंशाही शक्ति ने और स्वयम् राजपूतों ने भी राना को बहुत दिक किया यहां तक कि वह रोटी से भी लाचार हो गया। किंतु मुसलमानों के अधीन होने का विचार उस पुरुषसिंह के मन में कभी नहीं आया। राजपूतों के अनैक्य (नाइत्तफाकी) का हम इसी से अनुमान लगा सकते हैं कि स्वयम् राना प्रताप के भाई अकबर की सेना में नौकर थे और कई बार राना के विरुद्ध लड़े थे। इन लड़ाइयों में कईबार यह दृश्य दिखाई दिया कि यदि एक भाई इस ओर है तो दूसरा उस ओर।

चित्तोड़ तो अकबर के अधीन हो चुका था, किन्तु राजपूताना अभी स्वतन्त्र था, न उस (राजपूताना) ने उसके अधीन होना चाहा. शोक कि प्रताप के बाद उदयपुर के वंश ने फिर प्रतापादित्य की कमी को पूरा करने वाला कोई वीर उत्पन्न नहीं किया, माना कि उदयपुर ने कभी मुसलमानों से सम्बन्ध करके कलङ्क नहीं लगाया और न अन्यान्य राजपूत

रियासतों के समान मुसलमानों के अनुचर बने तथापि उद-यपुर बहुत दिनोंतक अपनी स्वतन्त्रता को स्थिर न रख सका कभी स्वतन्त्र और कभी परतन्त्र, बस यही ताना बाना लगा रहा।

राजपूतों के पिछले इतिहास में एक और पवित्र नाम है। जिसने औरङ्गजेब को अपने राजपूती रक्त का पूरा प्रमाण दिया. यह नाम दुर्गादास राठौर का है। दुर्गादास महाराज यशवंतसिंह जोधपुर नरेश के भाइयों में से था और जब यशवंतसिंह के मारे जाने के बाद औरंगजेब ने उसके इक-लौते बेटे को वध करने के लिए यशवंतसिंह की रानी और उसके बेटे को देहली में धोके से घेर लिया तब शूरवीर दुर्गा-दास ने अपने युवराज को बचाया, प्रथम समस्त स्त्रियों को स्वयम् अपने हाथों से काट कर वीर शिरोमणि दुर्गादास और उसके साथी नंगी तलवारें लेकर शत्रुओं की सेना को चीर कर निकल गये। उसके बाद दुर्गादास बराबर औरंग-जेब से लड़ता रहा। निस्सन्देह दुर्गादास की धीरता, साहस, दूरदर्शिता का औरंगजेब के राज्य को नष्ट करने में बहुत और बड़ा भाग है।

यहां तक हमने अपनी अवनति के इतिहास को अपने देश भाइयों के सामने रक्खा। इस समस्त कथन से हमारी अभि-लाषा इतिहास लिखने की नहीं क्योंकि यह काम बहुत कठिन और बहुत समय का है, हमारा अभिप्राय इतना लिखने से यह है कि हम अपने भाइयों को अपनी अवनति के इतिहास की ओर ध्यान दिलायें, और उन को इस बात का प्रमाण दें कि जो लोग यह सिद्ध करना चाहते हैं कि हमारी जाति १००० या ८०० वर्ष मुसलमानों की गुलाम रही वे ग़लती पर हैं, कायरता का कलङ्क हिन्दू जाति के मस्तक पर नहीं लग

सकता। समस्त हिन्दू न कभी बहादुर थे न हैं और न होंगे परन्तु सारे हिन्दू न कभी कायर थे और न हैं और न कभी होंगे। जातिवाचक होकर कायरता कभी हिन्दुओं के हिस्से में नहीं आई। जो जाति अधिक संख्या में शूरवीर रखती है, जिस जाति में जाट, राजपूत, खत्री, मरहठे और अन्यान्य योद्धा जातियाँ मौजूद रही हैं और अब भी हैं उस जाति को कायर कहना नितान्त असत्य है। हमारे मुसलमान भाई जो हम पर कायरता का प्रायः दोषारोपण करते हैं, अपने गिरेबान में मुँह डालकर देखें अन्ततः उनका अधिक भाग भी तो हममें से ही है। सबसे बड़ा मुसलमान रईस जो इस समय हिन्दुस्तान में है हिन्दुओं की सन्तान से है और भी बड़े बड़े मुसलमान वंश हिन्दुओं की सन्तान हैं। हमारा यह दावा है कि हिन्दुओं की कोई जाति भी सब की सब कायर नहीं कही जा सकती, सबसे अधिक कायरता का कलङ्क[१] बंगालियों और बनियों पर लगाया जाता है, परन्तु स्मरण रहे कि इतिहासमें बनियों और बंगालियों की शूरता का वृत्तान्त भी लिखा हुआ है। बख्तियार खिलजी जब नदिया के जीतने के गर्व से आसाम की ओर बढ़ा था तब बहुत कठिनता से अकेला वापस पहुंचा था। हर जाति में व्यापार करने वाला भाग दूसरे मनुष्यों के मुकाबले में अपने काम और अपनी आदतों के कारण जरूर कम दिलेर होता है तथापि राजपूताना के अग्रवाल वा स्वाल वंश वालों ने कई बार खजाना और दीवान की पद्धवियों को छोड़कर तलवारें हाथ में लीं और अपने राजपूत सरदारों के साथ बराबर मैदान में लड़े। ब्राह्मणों में महाराष्ट्र ब्राह्मण इस

---

[१] यह जमाना गया गुजरा जब कि बङ्गालियों पर यह मिथ्या दोष लगाया जाता था। आज कल किसकी शक्ति है जो उनकी ओर टेढ़ी नजर से देख भी सके। (अनुवादक)

तक युद्ध की मूर्ति हैं। क्षत्रिय और खत्री नाम भी इतिहास में बेठकाने मिलते हैं। पंजाबमें तो कदाचित् अभी हज़ारों हिंदू मुसलमान ऐसे होंगे जिन्होंने रणजीतसिंह के समयमें खत्रियों की वीरता के नमूने देखे होंगे सरहद के अफ़ग़ान तो अभीतक खत्रियों को अच्छी तरह याद रखते हैं। हमने यह पृष्ठ अपनी जाति पर दिये इलजामों के उत्तर में नहीं लिखे प्रत्युत अपनी जाति को यह दिखलाने के लिये लिखे हैं कि मुसलमानी राज्य के किसी समय में भी हिन्दुओं ने दिलेरी वीरता और स्वतन्त्रता की इच्छा को हाथ से नहीं दिया और कष्टों को चुप रह कर ही नहीं सहा वरन् आज २० करोड़ हिन्दू न पाये जाते। अब भी अंग्रेजी सरकार की फौजों में आधे से अधिक हिन्दुस्थानी हैं। सरकारी फौजों में सबसे अधिक नामवरी और प्रसिद्धि गोरखा और सिक्ख पल्टनों ने प्राप्त की है। आजकल महारानी विक्टोरिया[१] के राज्य में चहुंओर शान्ति है और शस्त्र का कानून जारी है कदाचित् समस्त हिन्दुस्तानी बिना किसी धर्म या सम्प्रदाय के अपनी वीरता दिखलाने का कोई अवसर नहीं रखते। अंगरेज सरकार ने अपनी बुद्धिमानी से समस्त जाति को बेहथियार करके ऐसा कर दिया है कि आशा नहीं कि उनको कभी दिलेरी या वीरता के दिखलाने का अवसर मिले।

पस आजकल कायरता और वीरता की चर्चा कागज़ी तोपों से बढ़कर नहीं है। अब तो कायरता की परीक्षा क्रिकेट फुटबाल और टेनिस के मैदानों में होती है। हिन्दू युवकों को चाहिए कि इन मैदानों में पीछे न रहें, माना कि शस्त्र हमारे पास नहीं हैं किन्तु स्मरण रहे कि जो मनुष्य अपनी रक्षा

१मूल पुस्तक जिस समय लिखी गई थी उस समय स्वर्गीया महारानी विद्यमान थीं और न उस समय किसी प्रकार की अशान्ति थी। (अनुवादक)

स्वयं नहीं कर सकता वह किसी काम का नहीं। उसका धर्म, उसका कर्म, उसका माल, उसकी सम्पत्ति, उसकी स्त्री की धर्म रक्षा, उसकी जाति की प्रतिष्ठा हमेशा संकट में है। अतः क्या धर्म की रक्षा के लिये, क्या सम्पत्ति की रक्षा के लिये, क्या प्राणों की रक्षा के लिये शारीरिक बल की आवश्यकता है। यदि प्रत्येक बलवान् चोर या डाकू हमारी कमाई हुई सम्पत्ति को हमसे छीन सकता है तब समस्त संसार की उपाधियाँ किसी काम की नहीं हैं। अगले पृष्ठों में हम शारिरिक बल हिम्मत एवं वीरता का एक उदाहरण दिखलायेंगे जिसने अपने शारीरिक बल को अपनी हिम्मत और वीरता को कैसे अद्भुत प्रकार से अपने धर्मकी रक्षा में, अपनी जातिकी रक्षा में, और अपने वंश की उन्नतिमें लगाया। शिवाजी का जन्म ऐसे समय में हुआ जबकि हिंदुस्तान से विद्या-प्रेम उठता जाता था और कोई मनुष्य भी शांतिसे दो रोटी नहीं खाता था। एक बार के बिछुड़े हुए मित्र पिता पुत्र भाई को एक दूसरे से मिलने का विश्वास नहीं था, दो धार्मिक भाइयों को यह विश्वास न था कि वे एक वर्ष तक एक ही धर्म में रहेंगे न किसी की सम्पत्ति सुरक्षित थी और न किसी का धर्म्म ही। निदान वह एक विकट समय था। केवल हिंदुओं ही के लिये नहीं प्रत्युत हिंदू मुसलमान दोनों के लिए प्रतिक्षण लड़ाई झगड़ों का भय बना रहता था। रक्त के नाले बह जाते थे। शहरों के शहर आनकी आन में बर्बाद हो जाते थे, लखपती कङ्गाल और कङ्गाल लखपती हो जाता था, न मन्दिर ही रक्षित थे और न मसजिदें ही। शिवाजी ने ऐसे समय में जन्म लिया और बाद को जन्म भर इस समय की छाया उनके जीवन पर पड़ी रही। ऐसी दशा में उत्पन्न होकर जिस प्रकार उस महापुरुष ने धर्म्म के गहरे प्रेम का अद्वितीय परिचय दिया, जिस प्रकार उसने

स्त्रियों की रक्षा की और न केवल अपना ही आचरण शुद्ध रक्खा, प्रत्युत जब कभी किसी व्यक्ति ने किसी स्त्री से बुरा व्यवहार किया तब उसको कठोर दण्ड दिया, जिस तरह उसने निर्धन खेतीहरों की रक्षा की और उनका पक्ष लिया, उसके ये गुण प्रशंसनीय ही नहीं हैं प्रत्युत यह सिद्ध करते हैं कि इन गुणों का रखने वाला मनुष्य संसार में अद्वितीय पुरुष था। शिवाजी ने अपने धर्म की रक्षा की। गौ ब्राह्मणों को बचाया परन्तु किसी अन्य मत का खण्डन नहीं किया, यह सब से बड़ी प्रशंसा है जो औरङ्गज़ेब के समय में उत्पन्न होने वाले शिवाजी जैसे एक हिन्दू वीर की हो सकती है।

दक्षिण का मुसलमान खाफ़ीखां जो अनेक स्थल पर शिवाजी को "सग" और "काफ़िर" के नाम से याद करता है और जिसने शिवाजी के मृत्युसमाचार को इस प्रकार लिखा है कि "काफ़िर नरक को गया" किन्तु वह भी शिवाजी के सदाचार की प्रशंसा करता है।

शिवाजी की जीवनी से जो संक्षेप से आगे लिखी जाती है हमारे पाठक मालूम करेंगे कि शिवाजी में महान् पुरुष होने के सब गुण विद्यमान थे, शिवाजी में प्रबन्ध करने की जैसी शक्ति थी वैसी किसी अन्य उसके साथियों के भाग में नहीं आई। वह आर्गिनीजेशन की प्रतिष्ठा को ऐसी अच्छी तरह जानता और आर्गिनीजेशन के सिद्धान्तों को ऐसी भली प्रकार जानता था कि यदि आजकल होता तो बड़े से बड़े योरोपियन विद्वानों और जनरलों से बाज़ी ले जाता। युद्ध विद्या में निपुण था, शत्रु को निर्बल करने के ढंग खूब निकालता था। शिवाजी बड़ा धीर था। यद्यपि किसी के ताने नहीं सहता था किन्तु दिलेरी और वीरता में अद्वितीय था शाहंशाह औरङ्गजेब के वज़ीर से एक ज़रासे मामले पर आगबबूला हो

गया और कुछ भी भय न किया। अपने धर्म्म में उसका ऐसा पक्का विश्वास था कि औरङ्गजेब को भी इस विषय में मात देता था। वीरों की बड़ी प्रतिष्ठा करता था, अपने सदाचारमें किसी को अपने समान नहीं रखता था, स्वयं वह इतना शुद्ध और पवित्र था कि आज हम ऐसे महान् पुरुषों की रामकहानी अपनी जाति के नवयुवकों को सुनाते हैं, आशा है कि वे अपने कर्त्तव्य का पालन करेंगे और शुद्ध पवित्र रह कर अपने सदाचार का प्रमाण देंगे। परमेश्वर हमारे देश भाइयों के हृदय में देश भक्ति का पवित्र चित्र अङ्कित करें जहां एक ओर देश एवं जाति से प्रेम करना सिखलायें साथ ही दूसरी ओर शुद्ध पवित्र आचरण एवं आदर्श जीवन प्रदान करें।

॥ शमित्योम् ॥

शिवाजी का जीवनचरित्र।

वंश-विवरण



शिवाजी मां बाप दोनों की ओर से राजपूत थे। पितृपक्ष से वह उस पवित्र वंश में उत्पन्न हुये जिस में बड़े बड़े शूरवीर उत्पन्न हुये थे। जो वंश बहुत समयतक स्वतन्त्र रहा जिसकी सन्तान अपनी जाति और देश के लिये अनेक बार लड़ी और बहुत सी कठिनाइयां झेलते हुये भी मुसलमानों से सम्बन्ध नहीं किया जो अद्यावधि अपनी इस पवित्रता के कारण समस्त राजपूतों में शिरोमणि है। हमारा संकेत उदयपुर के रानावंश (१) की ओर है। माताकी ओर से भी शिवाजी एक ऐसे ही प्राचीन वंश से हैं। मुसलमानों के आक्रमणों से पहले दक्षिण में यादव वंश के राजपूत राज्य करते थे, जिनकी राजधानी देवलगढ़ थी, जिसे बाद को मुहम्मद तुगलक शाह ने दौलताबाद बनाया। शिवाजी का नाना जादोरायजी उसी वंश से था। यद्यपि समय के परिवर्त्तन से राज्य जाता रहा था तथापि उस का वंश अपने इलाके में प्रतिष्ठित और उच्च समझा जाता था। कुछ न कुछ इलाके आश्रय इस के

---

(१) मुसलमानी इतिहास लेखक खाफ़ीखां लिखता है कि शिवाजी उदयपुर के राजवंश का था, किन्तु उसने अपने से नीच जाति की स्त्री से सम्बन्ध कर लिया था जिस से एक लड़का उत्पन्न हुआ इस लिये वह लज्जित होकर राजपूताना छोड़कर दक्षिण में आ बसा। वहां उस लड़के का विवाह मरहठा के यहां कर दिया। मि० जस्टिस रानाडे अपने मरहठा इतिहास में शिवाजी को बाप की ओर से उदयपुर के राना वंश से मानते हैं।

पास थे और मुसलमानी राज्य में भी इसी वंश के राजपूतों को अच्छे अच्छे पद मिलते रहे।

मराठा वंश में जादों का वंश सब से अधिक बलशाली वंश था और इन लोगों में सब से अधिक प्रतिष्ठित और जागीरदार था। जादोराय का एक वंशज निजामशाही बादशाहत में दस हजार का जागीरदार था उन के वंश में सदा से देशमुखी चली आती थी। शिवाजी के दादा का नाम मल्लूजी भोंसला था जो देरोल ग्राम में रहा करता था। मल्लूजी का विवाह दक्षिण के एक प्रतिष्ठित वंश में हुआ था जो धनवान् और प्रतिष्ठित होने के अतिरिक्त बहुत प्राचीन भी था।

मल्लूजी का साला नायनाटक नीरमल था, उस को जगपाल भी कहते थे, यह सरदार अपने समय का एक नामी लड़ाकू वीर हो गया है। बीजापुर के राज्य में उसका वंश दूसरे नम्बर का था परन्तु स्वतन्त्रता की अभिलाषा ने बादशाह को इस स्वतन्त्र लड़ाइयाँ और लूट मार करने पर प्रस्तुत कर दिया। जगपाल की बहन मल्लूजी को ब्याही थी। भोंसला उन का वंशसूचक नाम था जिस की बाबत ठीक पता नहीं लगता कि यह शब्द किस शब्द का अपभ्रंश है। एक मुसलमान इतिहास लेखक लिखता है कि यह भोंसला शब्द घोंसले का अपभ्रंश है। चूंकि इन का प्रथम वंशधर अथवा वह लड़का जो राजपूताने से आया था चिरकाल तक जङ्गल में घूमता रहा पूर्व इस के कि उस का बाप उसे शहर में लाया इस लिये उस घोंसला वंश का अपभ्रंश भोंसला हो गया। पर ग्रान्टडिफ साहब इस का और ही कारण बताते हैं। वे कहते हैं कि बाहमनी वंश वालों के राज्य में इस वंश का एक मनुष्य एक पहाड़ी किले पर एक जानवर की कमर में रस्सी बाँध

कर चढ़ गया था उससे पहिले कोई उस क़िले पर नहीं चढ़ा था और किला बड़ा दुर्गम समझा जाता था। उस दिन से उस का नाम भोंसला होगया।

मल्लूजी भोंसले का बड़ा बेटा शाहजी भोंसला था। शाहजी का विवाह जादोराय की कन्या जीजीबाई से हुआ। इस विवाह की भी एक अनोखी कहावत है। मल्लूजी भोंसला एक साधारण जागीरदार था और जादोराय एक बड़ा जागीरदार था और प्रतिष्ठित था परन्तु दोनों वंशों में प्रेम चला आता था। एक बार मल्लूजी अपने बड़े बेटे शाहजी के साथ जादोरायके घरगया। जादोरायकी बालिका कन्या जीजीबाई उसके पास बैठी थी। जादोराय दोनों को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और हँसते हँसते अपनी छोटी लड़की से पूछने लगा कि क्या शाहजीकी स्त्री बनना पसन्द करेगी? जो लोग उपस्थित थे उनको सम्बोधन करके कहा कि "यह क्या अच्छा जोड़ा है।" बस इसका इतना कहना था कि मल्लूजी भोंसला कूद पड़ा और उस ने लोगों को सम्बोधित कर कहा कि मित्रो! तुम साक्षी हो आज जादोराय ने अपनी कन्या का सम्बन्ध मेरे पुत्र शाहजी से करदिया, जीजीबाई आजसे शाहजी की हुई।" परन्तु जादोराय फिर अपने वचन से फिर गया और दोनों में इस बात पर अनबन होगई। इसके कुछ समय उपरान्त मल्लूजी को स्वप्न में किसी खजाने का हाल मालूम हुआ और वह बड़ा धनाढ्य हो गया। सम्पत्ति मिलने पर और भी इस वंशकी प्रतिष्ठा बढ़ गई और दरबार से भी ५००० का अधिकार मिल गया। अहमदनगर के दरबारियों ने बीचमें पड़कर मल्लूशाह और जादोराय की फिर मित्रता करा दी और अन्त में शाहजी और जीजीबाई का विवाह हो गया।

मल्लूजी भवानी देवी का भक्त था। कहावत है कि उन दिनों देवीजी मल्लूजी को स्वप्नमें दिखाई दीं और उससे कहा कि तेरे वंश में एक बड़ा राजा होगा जिसमें महादेव जैसे गुण पाये जायंगे, जो महाराष्ट्र में न्याय को स्थापित करेगा और उन सब का नाश करेगा जो गो ब्राह्मण को सताते हैं, मन्दिरों को तोड़ते हैं, और उसका राज्य बहुत दिनों तक रहेगा। उसकी २७ पीढ़ियाँ राज्य भोगेंगी। मसूर का इतिहास लेखक कर्नल बेल्कसन यह लिखता है कि एक हिन्दू पुस्तक में जो सन् १६४६ ई० की लिखी हुई थी उसमें भी हमने यह भविष्यद्वाणी लिखी देखी कि ' धर्म कर्म का नाश होगया है, उच्च से उच्च वंश नष्ट होगये हैं परन्तु दुःख दूर होने का समय निकट आगया है, जब कि कुमारी कन्याएँ प्रसन्न होकर गीत गायेंगी और आकाश से भी पुष्पवृष्टि होगी ' जिस समय यह लिखागया उस समय शिवाजी का नाम उनकी जागीर से बाहर किसी को मालूम भी न था किन्तु कर्नल साहब लिखते हैं कि कुछ समय बाद ही लोगों को मालूम होगया कि यह भविष्यद्वाणी शिवाजी के आश्चर्य्यदायक कर्मों के ही लिये थी। इन भविष्यद्वाणियों से यह प्रकट होता है कि यह समय शिवाजी के लिये तैयार था और मनुष्य किसी ऐसे वीर अवतार की प्रतीक्षा कर रहे थे जो उनके धर्म्म को सामयिक क्लेशों से मुक्त करे।

मल्लूजी के मरने पर उस के पुत्र शाहजी भोंसले को अहमदनगर के दरबार में अपने पिता के अधिकार और जागीर मिल गई। कुछ काल उपरान्त ही पता लग गया कि बेटा बाप से अधिक बुद्धिमान और प्रतिष्ठित है। यह वह समय था जब कि जहांगीर के सेनाध्यक्ष दक्षिण को विजय करने के पीछे

पड़े हुये थे और अहमदनगर के प्रसिद्ध सेनापति मलिक से लड़ रहे थे। सन् १६२०ई० की लड़ाई में शाहजी ने खूब वीरता दिखाई और प्रसिद्धि पाई। इस लड़ाईमें उसका श्वशुर जादोराय भी उपस्थित था। यद्यपि मलिक अम्बर हार गया परन्तु समस्त इतिहास लेखक मानते हैं कि इस हार के उत्तरदाता मरहठे न थे। इस लड़ाई में शाहजी भोंसले और जादोराय ने जो कार्य्य किये उनसे मुग़लों की सेना में मरहठों की धाक बैठ गई और मुग़ल सेनापति इस प्रबन्ध में लग गया कि येन केन प्रकारेण मरहठों को अपनी ओर कर ले परन्तु कुछ दिनों बाद जादोराय मलिक अम्बर से क्रुद्ध होकर मुग़ल सेना से जा मिला। मुग़ल राज्य में उसे २४ हजारी के अधिकार मिलगये। १५ सवार भी उसके अधिकार में दिये गये। इससे अनुमान हो सकता है कि मुग़ल सम्राट के प्रतिनिधियों ने जो दक्षिण में लड़ रहे थे सम्राट के आदेशानुसार एक मरहठे सर्दार की कितनी प्रतिष्ठा की। जो सम्बन्धी उस के साथ आये थे उनको भी बड़े बड़े पद और अधिकार दिये गये, परन्तु शाहजी भोंसला अपने श्वशुर के साथ नहीं आया और अपनी पुरानी सरकार की सेवा में लगा रहा। सन् १६६७ ई० में जहाँगीर मर गया और इसके अगले साल सन् १६६८ ई० में शाहजहाँ मुग़ल राज्य के सिंहासन पर विराजमान हुआ। शाहजहाँ को उस सेनापति से जो दक्षिण में लड़ रहा था लागडाट थी उसने तत्काल ही खानजहाँ लोधी को दक्षिण के युद्ध से वापिस बुला लिया। खानजहां लोधी को दरबार में पहुंच कर बेईमानी का सन्देह हुआ और वहां से भाग कर दक्षिण में वापिस आगया और उसने यहां आकर निज़ामशाही (अहमदनगर) राज्य में शरण ली। बादशाह ने इसके पीछे बहुत सी सेना भेजी। वहां के समस्त हिन्दू रईसों

और शाहजी भौंसला आदि ने खानजहांकी सहायता की और मुसलमान सेना को बड़ी क्षति उठानी पड़ी और बड़ी निष्फलताके साथ वापिस आई। इस हारपर शाहजहांको इतना क्रोध आया कि स्वयं एक महती सेना लेकर दक्षिण को चल पड़ा। अन्ततः खानजहां उस के मुकाबले में अशक्त रहा और भाग निकला। शाहजी भौंसला ने देखा कि जिस की खातिर मुगल वंश वालों से लड़े थे वह भाग गया तब उन्हों ने भी सेवा के अतिरिक्त और कोई चारा न देखा। बुद्धिमान शाहजहां ने मरहठा सरदारकी बड़ी प्रतिष्ठा की और इसको छः हजारका अधिकार देकर पांचहजार सरदारका अफसर बना दिया और पहिली सम्पत्तिके अतिरिक्त और बहुतसी सम्पत्ति उसकोदी।

इतना होनेपरभी शाहजीभोंसला पूर्ववत् निजामशाहराज्य का शुभचिन्तक बना रहा, परन्तु जब निजामशाही सरकार के प्रधान मन्त्री फतहखां ने अपने बादशाह को वध करके शाहजहां से सन्धि करने का विचार किया किन्तु सन्धिके नियमों पर स्थित न रहा, तब शाहजी भौंसला ने निजामशाही राज्य को छोड़कर बीजापुर के बादशाह की सेवा स्वीकार की।

शाहजी का दक्षिण में इतना जोर था कि आदिलशाही (बीजापुर) गवर्नमेण्टकी तरफ उसका चला जाना बीजापुर के राज्य के लिए समुचित समझा। इस समय फतहखां ने शाहंशाही सेनापति महाबतखां से इत्तफाक करके दौलताबाद अर्थात् बीजापुरकी राजधानीपर आक्रमणकिया। शाहजी इस के साथ खूब वीरता से लड़ते रहे किन्तु अन्ततः उस सेना के सामने न जम सके और पराजित हुए। बीजापुर वालों ने फतहखां के साथ सन्धि की बातचीत आरम्भ की जिसमें एक यह शर्त भी थी कि फतहखां शाहजी की वीरता के कार्यों के उपलक्ष्यमें बहुत कुछ पारितोषिक दे। चतुर फतहखांने बीजा-

पुरियोंसे सन्धि करतेही मुगल सेनापर आगबरसानी आरम्भ करदी जिस से महावतखाँ को बहुत क्रोध आया और उसने फतहखां को गिरफ्तार करने का प्रबन्ध किया। जब फतहखां हाथ आगया तब महावतखां ने यह ठानी कि यदि शाहजी भोंसला को जीत लिया जाय तब बीजापुर और अहमदनगर दोनों पूर्णतया हाथ में आजायें। परन्तु मुसलमान सेनापति ने सब से पहले यह प्रबन्ध किया कि शाहजी की स्त्री और उस का पुत्र जो नीरापुर के निकट ठहर रहे थे किस प्रकार काबू में आयें, यद्यपि एक मुसलमान सेनापति ने अत्यन्त धोके के साथ उन को गिरफतार कर लिया परन्तु मरहठा सरदारों ने इस बातको गवारा न किया और जमानत आदि देकर जीजीबाई को कन्दने के किले में पहुंचा दिया।

इसी समय शाहजी एक और चाल चला। फतहखाँ वजीर (अहमदनगर,तो गिरफतार होही चुका था फतहखाँने जो बादशाह तख्तपर बिठायाथा उसको मुगलोंने पकड़कर गवालियर के किले कैद करदिया। शाहजी भोंसलाने तत्काल अहमदनगर के शाही खान्दान के एक अल्पवयस्क लड़के को सिंहासन पर बिठादिया और आप इसका वली या रक्षक बनबैठा। बीजापुर के राज्यमें इससमय दो बलशाली सरदार थे अर्थात् मुरण्डपंथ और अब्दुल्लाखाँ। यह दोनों शाहजीके पक्षमेंथे और गुप्तरूप से बीजापुर का अधिपति भी इनका सहायक था। शाहजहाँ को इन चालों पर और भी क्रोध आया। महावतखाँ और इसकाबेटा शाहशुजा दोनों इसलड़ाईमें विफलयत्न रहे,अन्ततः और औरङ्गजेब का नियत कियागया जो उससमय बिल्कुल नव युवक था और नाम मात्रही इस सेना का अधिपति था शाहजी भोंसले को परास्त करने के लिये दो जरनलखाँन जमा और खांनदौरा नामक नियत कियेगये और इसकाम के लिये उनको

एक बहुत बड़ी फौज दो गई तथापि वे दोनों जनरल शाहजी भोंसले को परास्त करने में सफल मनोरथ नहीं हुए। अन्ततः शाहजहाँ ने शायस्ताखां और अलीवर्दीखां को भी उनकी सहायता के लिये नियत किया और ये चारों शाह जी भोंसले के विरुद्ध लड़ाई करते रहे, शाहजी पूरे दो साल तक उनको तंग करता रहा माना कि बहुत से क़िले शत्रु के हाथ आ गये और बहुत सा इलाक़ा नष्ट भ्रष्ट हो गया परन्तु शाहजो हाथ न आया और शाहजहांने बीजापुर के बादशाह को तंग करके संधि करने के लिये विवश किया।

अन्ततः शाहजी ने भी मुक़ाबला छोड़ कर शाहजहां की आज्ञानुसार बीजापुर के बादशाह की सेवा स्वीकार की। शाहजी उस समय तक अपनी वीरता चतुरता और दानाई के पर्य्याप्त प्रमाण दे चुका था, बीजापुर की सर्कार ने ऐसे मनुष्य की सहायता को अच्छा समझा और उसे उसकी सम्पत्ति पुनः देदी। पूना भी इसकी जागीर में शामिल था। कुछकालके बाद कुहार, रूसकटी, बङ्गलौर, वालापुर और सीर उसकी सम्पत्तिमें बढ़ायेगये और फिर कुछही समय बाद करार प्रान्त में २२ देहात की (१) देशमुखी भी उसको दोगई। निदान इस प्रकार शाहजी ने बहुतसी जागीर और बहुत सा इलाक़ा प्राप्त कर लिया।

---

(१) देशमुखी एक हक का नाम था जिससे पैदावार का कुछ हिस्सा बतौर करके देशमुख को मिलता था।

शिवाजी का जन्म ।
और
बाल्य-काल ।

सन् १६२६ ई० में शाह जी भोंसला के घर में श्योनरी के किले में शिवाजी ने जन्म ग्रहण किया । इनका पिता इस समय लड़ाई में प्रवृत्त था और वह और उसका श्वशुर एक दूसरे के विरुद्ध सेना में थे, जिसका फल यह हुआ कि थोड़ेही दिनों में शिवा जी के पिता और इसकी माता में किसी कदर वैमनस्य हो गया । इसलिए सन् १६३० में शाहजी ने एक और खान्दान में विवाह कर लिया जिससे जीजीबाई मुसलमानों के हाथ आई इस समय वह अपने सम्बन्धियों के पास थी और उस ने शिवाजी को किसी ऐसी जगह छिपा रक्खा था कि जहां से वह मुसलमानों के हाथ से बचा रहे ।

छः वर्ष का बालक मुसलमान आक्रमणकारियों से बचता फिरता है इस अवस्था में जब कि आजकल के बच्चे गलियों और बाज़ारों में खेलते फिरते हैं मातायें इस बात की चिन्ता नहीं करतीं कि वे कहां खेल रहे हैं । शिवाजी की माता अपने बच्चे को छिपाती थीं और बड़ी सावधानी से इसको ऐसे स्थान में रखती थीं कि जहां से वह शत्रुओं के हाथ से बचा रहे । सन् १६३६ ई० तक शिवाजी ने अपने पिता के दर्शन नहीं किये अन्त को उसके माता पिता में फिर प्रेम होगया । शाहजी शिवाजी की शादी करके कर्णाटक की लड़ाई के लिये प्रस्थानित हुए और शिवाजी माता सहित पूना में रहे ।

शिवाजी के बाल्यकाल की एक कहानी प्रसिद्ध है जिस से उनके आगामी पवित्र जीवन का वृत्तान्त मालूम होता है। कहते हैं जब शाहजी दर्बार बीजापुरमें था तब एक दिन मुरार पन्त ने शिवाजी से कहा कि 'चलो आज तुम को दर्बार में लेचलें और बादशाह को सलाम करायें।' होनहार बालक ने इस पर प्रसन्नता की बजाय घृणा प्रकट की और कहा कि हम हिन्दू हैं, बादशाह यवन है और महायवन है और महानीच है। हम गौ और ब्राह्मण के दास हैं, वह उनका शत्रु है। हमारा और उसका मेल नहीं हो सकता। मैं ऐसे मनुष्य के दर्शन करना नहीं चाहता जो हमारे धर्म का शत्रु है और न मैं उसे छूना चाहता हूँ। मैं ऐसे मनुष्य को बादशाह नहीं मानता और न उसको सलाम करना चाहता हूं। सलाम तो एक तरफ़ रहा मनमें आता है कि उसका गला काट डालूँ मुरार पन्त बच्चे की यह बात सुनकर आश्चर्य करने लगा और उसके माता पिता को समस्त वृत्तान्त सुनाया। माता पिता दोनों ने समझाया कि "बेटा! यह समय इस प्रकार की बातों का नहीं है, इस समय मुसलमानों का राज्य है, उन के बादशाह को सलाम करना हमारा धर्म है" निदान ज्यों त्यों करके शिवाजी को दर्बार में ले गये, परन्तु शिवाजी ने बादशाह को न मुजरा किया और न सलाम ही उस के बाप और मुरार पन्त ने यह कहकर कि 'बच्चा है, दर्बार के नियम नहीं जानता' बात टाल दी। शिवाजी ने दरबार से लौटकर स्नान किया और नवीन वस्त्र पहने।

शाहजी के नौकरों में से दो मनुष्यों पर शाहजी का बहुत विश्वास था, उनमें से एक का नाम दादाजी करनदेव था। पूना का प्रबन्ध इसके सुपुर्द था, और शिवाजी तथा उनकी माता की रक्षा का भार भी उसी के ऊपर था, दादा जी एक

बड़ा स्याना मनुष्य था। शिवाजी की उत्तम शिक्षा उसी के श्रम का फल है। उसने अपने कर्त्तव्यों को बड़ी बुद्धिमानी से पूर्ण किया। जागीर का प्रबन्ध इस उत्तमता से किया कि खेती में खूब दूनी उन्नति होने लगी और इलाके की जन-संख्या भी बढ़ गई। सबसे अधिक चतुराई उसने इस बात में दिखलाई कि अपने इलाके की समस्त पहाड़ी आबादी को जिनको मावलि कहते थे अपना दास बना लिया। प्रजा बहादुर और लड़ाका, किन्तु बिल्कुल निर्धन थी। उसने कई वर्ष तक इन लोगों से बिल्कुल लगान नहीं लिया, प्रत्युत अनेक प्रजा के बहुत से मनुष्यों को अपना नौकर रख कर उनका पालन किया। दादाजी की यह दूरदर्शिता शिवाजी के काम आई, जहाँ उसने जागीर का इतना उत्तम प्रबन्ध किया साथ ही शिवाजी को शिक्षा देने में भी किसी प्रकार की कमी न छोड़ी। जितना बन सका पढ़ाया लिखाया, इस समय मरहठों में पढ़ने लिखने की इतनी चर्चा नहीं थी बल्कि युद्ध-विद्या सीखना ही उनका प्रधान कर्त्तव्य समझा जाता था। शिवाजी शैशवावस्था में ही घोड़े पर चढ़ने में अद्वितीय और शस्त्र चलाने में अनुपम होगए लक्ष्य लगाने और भाला चलाने एवं तलवारों के प्रयोग करने में भी सब जगह प्रसिद्ध होगये उन समस्त रीतियों को भी दादाजी के अनुग्रह से जान गया जो उस जैसे वीर के लिये आवश्यक थीं। रामायण एवं महाभारत के सुनने का उसको बड़ा था, यहाँ तक प्रेम कि बड़ी अवस्था में अपने प्राणों को संकट में डालकर भी जहाँ कथा होती वहाँ पहुंचता था उसके धार्मिक विचार बड़े दृढ़ थे। थोड़ी ही अवस्था से मुसलमानों के जुल्मों से इतनी घृणा हो गई थी कि समस्त जीवन बनी रही।

शिवाजी को जवानी में मादिली लोगों से मिलने का अवसर बहुत मिला। उसने उन लोगों के गुणोंको भल प्रकार जाना और आरम्भ ही से ऐसी मित्रता की कि अन्त तक वे उसके सहायक रहे। जागीर के प्रबन्धमें भी दादाजी शिवाजी को शिक्षा देता रहा, जिसके कारण वह सर्वप्रिय हो गया। शिवाजी के हृदय में स्वतन्त्रता की अभिलाषा पहले ही से थी जो अभी से रङ्ग दिखाने लगी। कभी २ वह दिन दिन भर गायब रहता और ऐसे लोगों से मिलता जो किसी राज्य के अधीन नहीं थे और न किसी कानून के पाबन्द थे। दिनों और रातों जगलों में घूमता रहता, यहाँतक कि कुछ यह ख्याल करने लगे कि शाहजी का पुत्र शिवाजी डाकुओं से मिलगया और ये शिकायतें दादाजी के कानों तक भी पहुंचीं। इसको रोकके वास्ते जागीर का बहुत बड़ा हिस्सा उसके अधीन कर दिया इससे इतना प्रभाव अवश्य हुआ कि दिनकी अनुपस्थिति जाती रही किन्तु जो चीज़ उसकी प्रकृति में मिल गई थी वह कैसे दूर होसकती थी? शाहजी की जागीरमें कोई किला नहीं था और आत्मरक्षा एवं धर्मरक्षाके लिये इस समय किले का होना बहुत आवश्यकीय था।

शिवाजी के मस्तिष्क में यह विचार उत्पन्न हुआ कि किसी न किसी तरह कोई किला हाथ आये। मदिली लोगों के मनों को तो शिवाजी जीत ही चुका था, देश के दुर्गम मार्गको शिकार खेलने में जान चुका थ, बस किसी किले का प्राप्त करना शिवाजी के लिए उतना कठिन कर्म न था जिसके लिये वह अपनी उमंग पर मनको न लगाता।

पूना के पश्चिम भाग में २० मील की दूरी पर तोरण नामक पहाड़ी किला था, जिसका मार्ग बहुत कठिन था।

शिवाजी ने अपने मदिलियों की सहायता से सब से पहले तोरण के दुर्गाध्यक्ष से परिचय प्राप्त किया, अन्ततः उसको किसी ढङ्ग से इस बात पर प्रसन्न करलिया कि वह उपरोक्त किला उस के अर्पण करदे। शिवाजी के जीवन का सब से पहला काम जो बिना किसी लड़ाई के समाप्त हुआ तोरण के दुर्ग को प्राप्त करना था जो सन् १६३६ ई० में सफल हुआ। उस समय जब कि शिवाजी की अवस्था १९ वर्ष की था दुर्ग प्राप्त करके शिवाजी ने अपने वकील बीजापुर को भेजे ताकि वह बादशाह पर यह प्रकट करें कि शिवाजी ने वह काम केवल बादशाही सेवा को ही दृष्टिगत रखकर किया है। इस ने अपने वकीलों के द्वारा यह निवेदन भेजा कि ऐसे देश में शिवाजी जैसे वीर नौकरके रहनेसे बहुत लाभ होना सम्भव है। साथ ही पहले जागीरदारों के बदले दुगुना कर देने का इकरार किया, उधर दरबार में शिवाजीके वकील इस निवेदन के प्रकट करने के ढङ्ग निकाल रहे थे, इधर शिवाजी अपने किले को सुदृढ़ बनाने और सेना के बढ़ाने में लगा हुआ था। दरबार वालों ने इस निवेदन के उत्तर देने में जान-कर देरी की, परन्तु यह विलम्ब शिवाजी के लिये बहुत लाभ-दायक प्रतीत हुआ। सौभाग्य से किले के खण्डहर खोदते खोदते एक खजाना भी हाथ लग गया, जिस से शिवाजी ने शस्त्र खरीद कर एक और किले के बनाने की ठानी, अतः तोरण से तीन मील की दूरी पर महोविदा की पहाड़ी पर उस ने एक और किला बनाया जिस का नाम राजगढ़ रखा यह मरते दम तक उसकी राजधानी रहा।

जब इस समस्त कार्य्यवाही की रिपोर्ट बीजापुर पहुंची तब उन्होंने शिवाजी को इस अभिप्रायके परवाने रवाना किये कि वह अपनी हरकतों से बाज़ आये और साथ ही शाहजी

को कर्नाटकमें लिखा कि वह अपने बेटे को समझाये। शाहजी ने लिख दिया कि "मेरे बेटे ने मेरी सम्मति के बिना लिये ही ऐसा किया है। क्योंकि मैं और मेरे सम्बंधी दरबार के शुभचिन्तक हैं इसलिए सम्भव यही है कि शिवाजी ने जो कुछ किया है वह केवल आगार की उन्नति और रक्षा ही के लिए किया होगा।" इधर शाहजी ने दादाजी को लिखकर अपनी अप्रसन्नता प्रकट की और उनसे उत्तर मांगा और उसके द्वारा शिवाजी को कहला भेजा कि वह भविष्य में ऐसा न करे। इस सन्देश के पहुंचने पर शिवाजी को बड़ी चिन्ता हुई। एक ओर तो बापकी आज्ञा दूसरी ओर धर्म और राज्य प्राप्त करने की प्रबल इच्छा। उस समय उस के मन में अद्भुत विचार उत्पन्न हो रहे थे, उस के मन की अद्भुत दशा थी। अन्त में उस ने अपनी प्यारी स्त्री से सम्मति ली। स्त्री ने रीत्यनुसार पहिले तो कहा कि 'स्त्रियों की सम्मति ठीक नहीं होती क्योंकि उनकी बुद्धि बहुत कम होती है यदि आप मेरी सम्मति पूछते हैं तब तो गौ ब्राह्मण की रक्षा करना और धर्म की रक्षा करना बनिस्बत पिता की आज्ञा मानने से अधिक अच्छा है, बुद्धिमती स्त्री ने यह भी कहा कि 'शाहजी यहां से दूर हैं उनको क्या मालूम कि इस इलाके पर कौन कौन सी विपत्ति पड रही हैं, यदि वह यहां होते तो कभी ऐसा न कहते प्रत्युत आप को इस काम में सहायता देते। शिवाजी की इच्छा तो थी ही इधर स्त्री के वचनों ने मानो अग्नि पर घी डाल दिया। उसने अपने विचार दृढ़ कर लिए यद्यपि दादाजी ने भी आदेशानुसार उसे समझाया, क्योंकि दादाजी उसका शिक्षक और रक्षक रहा था इसलिये वह उस को ऐसे उत्तर दे देता था जिससे कि वह प्रसन्न हो जाय। शिवाजी के हृदय में धर्म रक्षा की अग्नि प्रज्वलित थी, दादा

जी भी समझ गये कि शिवाजी के विचार अटल हैं उसने चुप रहने के अतिरिक्त और कोई उपाय उचित न समझा। कुछ समय बाद दादा जी स्वर्ग लोक को सिधार गये। मरने से पहिले उसने शिवाजी को बुलाया और बजाय इसके कि वह उसको इस काम से रोके यह उपदेश किया कि वह धीरता से स्वतन्त्र होने की चेष्टा करता रहे, गौ ब्राह्मण और प्रजा की रक्षा में लगा रहे हिन्दुओं के मन्दिरों को बरबादी से बचाये और अपने लिये खुद भी नाम पैदा करे। वृद्ध शिक्षक के इस उपदेश ने वीर शिवाजी के हृदय में नवीन उत्साह उत्पन्न कर दिया। बस अब क्या था खुल्लमखुल्ला कार्यवाही आरम्भ हो गई। जिस का भय था उसने भी मरते समय आज्ञा देदी। दादाजी की आज्ञा उसके लिये ईश्वराज्ञा थी जिसका पूरा करना उसका परम कर्त्तव्य था।

दादाजी के मरने पर शिवा जी ने अपने पिता की तरफ से जागीर का प्रबन्ध हाथ में लिया और जब उसके बाप ने शेष मालगुजारी का हिसाब मांगा तो लिख भेजा कि इस निर्धन इलाके की आय इसके व्यय के ही लिये काफ़ी होती है बचने बचाने को कोई गुंजाइश नहीं। सारी जागीर में केवल दो आदमी थे जो शिवाजी से सहमत नहीं थे इसलिए ज़रूरी था कि या तो उनको अपने पक्ष में किया जाय और या उन को पृथक् किया जाय। उनमें से एक फिरङ्गाजीनसी था और दूसरा बाजी मोहती। पहला चाकन के किले का रक्षक था और दूसरा शाहजी की दूसरी स्त्री का भाई था और सोपा का ज़िला इसके अधीन था। शिवाजी के दूतों ने फिरङ्गा जी को तो अपने पक्ष में कर लिया। बस अब केवल बाजी मोहती बाकी रहगया। शिवाजी इसकी चिन्ता ही में था कि गोन्दाने का क़िला भी उसके हाथ में आ गया। क़िले के रक्षक मुस-

लमान ने एक बड़ी घूंस खाकर यह किला शिवाजी के अर्पण कर दिया यह किला और किलों से बड़ा और उचित स्थान पर था। उस का नाम शिवाजी ने सिंहगढ़ (शेर का स्थान) रक्खा, इसी नाम से वह अबतक प्रसिद्ध है। बाजी मोहर्ता के पास ३०० चुने हुए सवार थे और सोओं पर इसका कब्जा था। शिवाजी ने इस को कई बार लिखा और वह भी चिकने चुपड़े उत्तर देता रहा परन्तु शाहजी की बिना आज्ञा के उसने हिसाब के चुकाने से स्पष्ट इन्कार कर दिया। शिवाजी अपने आदमियों को लेकर रात को उसपर जापड़ा और मोहर्ता को उस के साथियों सहित कैद कर लिया, मोहर्ता को उस ने कर्णाटक को रवाना करदिया और शेष आदमियोंमें से जिन्होंने उस की नौकरी स्वीकार करली उन को तो अपने पास रख लिया और दूसरों को कर्णाटक ही अपने पिता के पास भेज दिया। इन इलाके में कर्णाटक और पूर्णधर ही बड़े किले थे जो शाही अफसरों के हाथ में थे और जिन पर आरंभ ही से शिवाजी की दृष्टि थी इन में से एक किला तो मुसलमान किलेदार को घूंस देकर ले लिया था अब दूसरे किले की ताक में था कि इतने में दूसरा किलेदार मर गया।

मृत किलेदार के तीन पुत्र थे जिन में बड़े बेटे ने बिना शाही आज्ञा के आये हुये ही अपने पिता की जगह संभाल ली और किलेदार बन बैठा। दोनों छोटे बेटे शिवाजी की सहायता चाहने लगे इस बहाने से शिवाजी ने पूर्णधर किले के नीचे डेरा जा लगाया;सब भाइयोंने शिवाजीको उसके कई सरदारों सहित किले में निमन्त्रण दिया और शिवाजी रात्रि को किले में रहा। उसी रात मौका पाकर उस ने बड़े भाई को तो कैद कर लिया। और दूसरे भाइयों एवं अन्यान्य किला निवा-

मियों को भी अपने हाथ में कर लिया। इस कूटनीति से किले को अपने वश में कर उसने किले के बदले बहुत सी जागीर उन तीनों भाइयों को देदी और तीनों को अपनी सेवा में ले लिया।

निदान उस ने थोड़े ही समय में बिना किसी प्रकार की लड़ाई के समस्त जागीर को अपने वश में कर लिया जो चाकिन और गोराक बीच में मौजूद हैं। बीजापुर का बादशाह इस समय महल और कबरें बनाने में लगा हुआ था और इस का सेनापति शाहजी कर्णाटक की लड़ाई पर नियुक्त था और उधर दौरा कररहा था।

शाहजी की क़ैद और छुटकारा।

२१ वर्ष की अवस्था तक जो कार्य्य शिवाजी ने किये उन को हम ऊपर लिख चुके। स्वतन्त्रता एवं राजपाट की प्रबल अभिलाषा ने उसको धन की ओर प्रबल कर दिया और नवीन युद्धों के लिये नवीन २ सामग्री एकत्रित करने लगा। एक ओर तो उस ने धन एकत्रित करके उस को खजाना आरम्भ कर दिया दूसरी तरफ अपने दूत समस्त इलाके में भेज दिये ताकि वे हिन्दू प्रजा को उसके पक्ष में मुसलमानों से घृणा उत्पन्न करायें।

शिवाजी की स्वतन्त्र कार्य्यवाही की निस्बत यदि किसी को सन्देह बाकी था तब वह शीघ्र एक ऐसी घटना से दूर होगया जो इस बात का पर्य्याप्त प्रमाण था कि शिवाजी अपने आप को किसी बादशाह के आधीन न समझता था इस लिये किसी से न दबता था। जब उसको यह समाचार मिला कि मुल्ला अहमद (कल्यान का हाकिम) ने एक बहुत बड़ा खजाना बिहार की ओर भेजा है तब वह २०० सवार लेकर जा पड़ा और खजाना लूट लाया। अभी इस लूट की खबर

दरबार बीजापुर में पहुंची ही थी कि साथ ही यह खबर भी मिली कि शिवाजी ने निम्न लिखित क़िलों पर क़ब्ज़ा कर लिया है— कंगोरी, टोंगटकोन, भोरप, कादरी, लोगण और राजपाजी। इन के अतिरिक्त शिवाजी के आदमियों ने ताला, गोशाला और राइरी नामी ग्रामों पर भी अपना अधिकार कर लिया है। इस पर भी तृप्ति नहीं हुई प्रत्युत कान्कन के इलाके के बहुत से शहरों को लूट कर राजगढ़ में बहुत सी सम्पत्ति एकत्रित कर ली है।

जिन लोगों को दादाजीने शिक्षा दी उनमें से एक आवाजी सोनदेव था जो केवल वीर ही न था बल्कि बहुत धीर- चतुर था इसने कल्यान पर चढ़ाई करके मुल्लाअहमद को कैद कर लिया। बस फिर क्या था इस इलाके में जितने और सुरक्षित किले थे हाथमें आगए। शिवाजी को जब यह समाचार मिला तब बहुत प्रसन्न हुआ और कल्यान पहुंच कर बहुत धन और माल सोनदेव को दिया और इस इलाके का उसको सूबेदार नियत करदिया, साथ ही बड़ी बुद्धिमानी से इलाके के प्रबन्ध में लग गया। मालगुज़ारी का प्रबंध देश की प्राचीन रीति के अनुसार आरम्भ किया और जो जायदादें हिंदुओं के प्राचीन मंदिरों और स्थानों की थीं और मुसलमानों ने छीन ली थीं फिर मंदिरों को दी गईं। साथ ही गोशाला और राइरी के निकट मज़बूत क़िले बनवाने आरम्भ किये। दो किले बने, एक भर्दोरी और दूसरा लङ्गाना। मुल्लाअहमद से जिसको आवाजी ने कैद कर लिया था शिवाजी बड़ी प्रतिष्ठा के साथ मिला और उसको छोड़ दिया। वह वहां से छूट सीधा दर्बार में पहुंचा जहां उसने शिवाजी की शक्ति का वृतान्त सबको कह सुनाया। आदिलशाहको बड़ी चिंता हुई। इसके मनमें यह संदेह था कि

यह सब कार्य्यवाही शिवाजी की साज़िश से हो रही है और चूँकि कर्नाटक में शाहजी बड़े जोर में था बादशाहने शिवाजी के विरुद्ध कार्य्यवाही करनेको मुलतवी रक्खा शाहजीके साथ एक और व्यक्ति जो मौचूल निवासी बाजी घौपुरी नामक था-बादशाह ने उसको लिख भेजा कि किसी न किसी प्रकार शाहजी को गिरफ़ार करले। चुनांचे उक्त बाजी ने शाहजी को दावत के बहाने अपने मकान पर बुलाकर कैद कर लिया और दर्बार में भिजवा दिया। जब शाहजी दर्बार में आया तब उससे कहा गया कि वह शिवाजीको उसके कामोंसे बाज रक्खे वरन् कुशल नहीं है। शाहजी ने शिवाजी को बहुत लिखा किन्तु उस तर्फ़ से कोई उत्तर नहीं मिला। उधर उसने बादशाह से बहुत प्रार्थना की कि शिवाजी से मेरा कुछ संबंध नहीं है, वह बादशाह ही से बाग़ी नहीं है, बल्कि मुझ से भी बाग़ी है लेकिन बादशाह ने एक न सुनी और अन्त को क्रोध में आकर आज्ञा दी कि शाहजी को किसी अन्धकारमय गढ़े में कैद कर दिया जाय और एक सूराख़ को छोड़कर उसका द्वार भी चिन दिया जाय और साथ ही यह भी धमकी दी कि यदि शिवाजी शीघ्र ही अराजकता फैलाना बन्द न करेगा तब यह सूराख़ भी बन्द करदिया जायगा और शाहजी ज़िन्दा ही दफ़न किया जायगा।

जब शिवाजी को यह समाचार मिला उसे बड़ी चिन्ता उपस्थित हुई। एक ओर पिता का जीवन संकट में था। दूसरी ओर वर्षों की कमाई नष्ट होती थी और स्वतन्त्रता की आशा-लता, जिस पर कि फल आने वाला था सूखी जाती थी। शिवाजी इसी उधेड़बुन में था कि उसकी बुद्धिमती स्त्री ने समझाया कि क्षमा प्रार्थना की बजाय स्वतन्त्रता से जो कार्य्यवाही की जायगी वह शाहजीके लिये अधिक लाभदायक

होगी। शिवाजी ने इस समय तक मुग़लों के राज्य में हाथ नहीं डाला था इस लिये इस दूरदर्शिता से लाभ उठाने के लिये शाहजहां से पत्र व्यवहार आरम्भ किया जिसका यह फल हुआ कि शाहजहां ने इस बात को स्वीकार कर लिया कि शाहजी के समस्त अपराध क्षमा कर दिये जाँय और शिवाजी को भी पाँच हज़ारी का पद देने का भी विचार किया। क्योंकि शाहजहां की कृपा और मुरारपन्त के बढ़े हुवे रसूख से शाहजी को कैद से छुटकारा मिला, यद्यपि वह चार वर्ष बीजापुर के दर्बार में उपस्थित रहा।

शिवाजी की गिरफ्तारी की कोशिश।

जब तक शिवाजी के पिता दर्बार में उपस्थित रहे उन्होंने अपनी कार्यवाही को शिथिल रक्खा। बीजापुर के बादशाह ने भी कोई कार्य्यवाही शिवाजी के विरुद्ध नहीं की कि कहीं समस्त जीता हुआ राज्य देहली के बादशाह के अर्पण न करदे तथापि दर्बार बीजापुर शिवाजी की ओर से बेसुध नहीं था इस बातकी गुप्त चेष्टा होती रही कि किसी प्रकार शिवाजी को गिरफ़्तार किया जाय। एक नीचात्मा हिन्दू बाजी शामराजी नामक ने इस काम के लिये बीड़ा उठाया और जिस इलाके में शिवाजी रहता था वहाँ ताक में बैठ गया। शिवाजी को खबर लग गई उसने स्वयं बाजी और उसके साथियों पर आक्रमण करके उनको जंगल में भगा दिया, जावली के राजा चन्द्रराव ने इस विश्वासघाती को अपने राज्य में होकर आने दिया था शिवाजी ने भरसक कोशिश की कि राजा को इस बात पर प्रसन्न करे कि मुसलमानों के विरुद्ध अपने देश को स्वतन्त्रता उत्पन्न करने में भाग ले, परन्तु जावली राजा ने इस बात को न माना इसके विरुद्ध उसने उस पार्टी

को जो शिवाजी को गिरफ़्तार करने के लिये जा रही थी अपने राज्य से जाने दिया। शिवाजी के मित्रों को उसके इस अनुचित कर्म पर क्रोध आया और वह उससे बदला लेने की ताक में लगा रहा यहाँ तक कि इस काम में उन्होंने दगा से काम लेना भी उचित समझा। राघोलाल और सम्भा जो कवाजी मित्र भाव से इसके राज्य में जा घुसे और एक प्राइवेट मुलाकात में उसे मार डाला, बाहर से उनके साथियों ने चहुँओर से जावली को जा घेरा। राजा चन्द्रराव और उनके मन्त्री अत्यन्त वीरता से लड़े अन्त में वज़ीर हिम्मतराव मारा गया, बेटे कैद होगए और जावली राघोलाल के हाथ आगया, समस्त मरहठा इतिहास लेखक एक मत होकर यह लिखते हैं कि राघोलाल आदि ने यह काम शिवाजी की बिना सूचना दिये हुए किया इसलिये यह दगाबाजी शिवाजी के शिर नहीं मढ़ी जा सकती। राजा चन्द्रराव का राज्य शिवाजी के हाथ आ जाने से शिवाजी की शक्ति बहुत बढ़ गई और उसने खेरा पर आक्रमण किया। बंदल देवमुखने जो आक्रमण के समय किले में था खूब वीरता के साथ मुकाबला किया और उसके आदमियों ने उस समय तक आधीनता का नाम न लिया। जब तक कि बन्दल लड़ता हुआ मारा न गया, अंत का किला शिवाजी के हाथ आगया और मुकाबला करने वालों में से देशमुख वाजीपर्वी के साथ बड़े सम्मान से मिला शिवाजी ने उसको समस्त पैतृक अधिकार दे दिये और उसको अपनी आधीनता में ले लिया। एक पैदल सेना की बड़ी संख्या उसको दीगई और उसने अपनी शेष आयु बड़ी भक्ति के साथ शिवाजी की सेवा में व्यतीत की।

नीर एवं किश्ना (कृष्णा) नदी के किनारे पर जो इलाका शिवाजी का था उसकी रक्षार्थ एककिला कृष्णानदीके निकास

पर बनवाने का काम अपने कार्यकर्त्ता एक ब्राह्मण के सुपुर्द किया, जिसने अत्यन्त बुद्धिमानी से इस काम को पूर्ण किया, इस किले का नाम प्रतापगढ़ रक्खा गया। निदान इस प्रकार अपने राज्य को बढ़ाकर और सेना को दृढ़कर उसने बीजापुर से भी अधिक शक्ति वाली रियासत को हानि पहुंचाने का विचार निश्चित किया।

मुग़लवंश के विरुद्ध शिवाजी की कार्यवाही का आरम्भ।

पूर्व इसके कि हम कुछ शिवाजी की नवीन कार्यवाहियों का वृत्तान्त सुनायें ऐतिहासिक श्रेणी को स्थित रखने के लिये आवश्यक है कि संक्षेप में कुछ उस चालबाजी का भी जिक्र करें, जिससे काबू पाकर औरङ्गजेब हिन्दुस्तान के सिंहासन पर बैठा। हिन्दुस्तान के इतिहास में यह वह समय है जब औरङ्गजेब पोलिटिकल शतरञ्ज की चालें चल रहा था। यहां तक कि उसने बादशाह शाहजहां को हरा कर अपनी बाजी जीत ली थी। प्रायः देहली के बादशाह दक्षिण की मुसलमानी बादशाहतों को हड़प करने को सोचते रहते थे क्योंकि देहली के सिंहासन का महत्व स्थिर रखने के लिये आवश्यक था कि गोलकुण्डा और बीजापुर के राज्य "कर" देते रहें। यद्यपि शाहजहां ने भी कई बार इनके विरुद्ध लड़ाई की और किसी कदर उनको हानि भी पहुंचाई। कुछ दिन तो ये राज्य एकत्रित होकर मुग़ल राज्य के सामने डटे रहे किन्तु उनके दुर्भाग्य से दूसरी बार फिर औरङ्गजेब ने कंधार की लड़ाई में जय प्राप्त कर दक्षिण का सूबा नियत किया।

उसको इस बात का बहुत ध्यान था कि इन दिनों रियासतों को हराकर मुग़ल राज्य के सूबे बनाये जायँ, इन दोनों

राज्यों में हिन्दुओं का जोर था और हिन्दू-पदधारियों की बड़ी प्रतिष्ठा और सम्मान था। गोलकुण्डे का बादशाह इस समय कुतुबशाह था और मीरजुमला जो हिन्दुस्तान के इतिहास में एक प्रसिद्ध व्यक्ति गुजरा है उसका प्रधान मन्त्री था. मीरजुमला के सहचर मुहम्मदअमीन से कुछ अपराध बन गया और बादशाह ने इसको दण्ड देने की ठानली। मीरजुमला को यह बहुत बुरा लगा और उसने शाहजहां के पास इस बात की शिकायत की। औरङ्गजेब ने भी शाहजहां के कान खूब भरे क्योंकि वह लड़ाई के लिये कोई बहाना ढूंढता ही था। जिसका यह फल हुआ कि शाहजहां ने क्रोध में आकर एक सख्त चिट्ठी लिखी। कुतुबशाह को यह बात बुरी मालूम हुई और उसने तत्काल मुहम्मदअमीन को कैद कर लिया, और मीरजुमला की समस्त सम्पत्ति जब्त करली। बस फिर क्या था? औरङ्गजेब को अवसर मिल गया औरंगजेब ने तत्काल लड़ाई ठान ली थी। औरङ्गजेब की लड़ाई में सबसे अधिक काम धोकों से लिया जाता था चुनांचे इस अवसर पर भी उसने अपने बड़े बेटे मुहम्मदसुलतान को बहुत सेना देकर गोलकुण्डे की तरफ रवाना किया परन्तु कुतुबशाह को यह सूचना दी कि शाहजादा शादी के लिये अपने चचा बङ्गाल के सूबेदार के पास जाता है वह बेचारा इस बेईमानी को जानता न था। कुतुबशाह को तभी पता लगा कि जब सुलतान मुहम्मद इसके शहर के द्वारों पर आ जमा, विवशतया कुतुबशाह ने अत्यन्त हीन भाव से संधि करली और एककरोड़ रुपया वार्षिक कर देना स्वीकार कर लिया। मीरजुमला दर्बार में देहली बुला लिया गया और वहां इसको मन्त्री का पद मिल गया। इसी बीच में मुहम्मद आदिलशाह बीजापुराधीश भी नवीं नवम्बर सन् १६५६ ई० को मर गया। दारा

शिकोह के द्वारा इस बादशाह का शाहजहां से परिचय था इस कारण भी औरङ्गजेब इसको हानि पहुंचाने की चिन्ता में रहा इसके मरते ही इसका बड़ा बेटा अली आदिलशाह तख्त पर बैठ गया। और उसने देहली नरेश के किसी आदेश पत्र की प्रतीक्षा नहीं की मुगलों को यह बात बुरी मालूम हुई और उन्होंने यह बहाना बनाया कि अली आदिलशाह, मुहम्मद आदिलशाह बादशाह बीजापुर का बेटा नहीं है और इस बहाने से बीजापुर पर चढ़ाई कर दी। मीरजुमला और औरङ्गजेब इस लड़ाई के अफ़सर थे, बहुत सी लड़ाई और मुक़ाबिले के पश्चात् बादशाह बीजापुर जो शाहंशाही सेना के सामने न जम सका, क्षमा का प्रार्थी हुआ। औरंगजेब को शाहजहां की बीमारी की खबर मिली औरंगजेब ने बीजापुरके बादशाह की संधि को उचित समझा और सन्धि कर झट देहली को चल दिया। इधर मुरादबख्श शुजा भी आगरे की ओर आ रहे थे। दाराशिकोह शाहजहां की आज्ञानुसार राजधानी में राज्य का कार्य कर रहा था औरंगजेब ने मुरादबख्श को यह दम दिया कि मैं तो फ़कीर हूं मुझे राज्य से क्या सम्बन्ध? दाराशिकोह और शुजा को काबू करके तुम्हें सिंहासन पर बिठाऊँगा और मैं भजन करूंगा। मुझे तो ईश्वर भक्ति चाहिये, राज्य से मुझे क्या सरोकार? दुर्भाग्य से मुरादबख्श इस पट्टी में आगया। मुराद और औरंगजेब की सेनाओं ने मिलकर दाराशिकोह की फौज को भगा दिया। इसके बाद फिर इसी प्रकार औरंगजेबने अपने सब भाइयोंको पकड़ २ कर मारा और पिताको कैदकर स्वयं राज प्राप्तकिया यह समस्त वृत्तान्त हिन्दोस्थान के इतिहासज्ञों को भले प्रकार मालूम है। निदान १६५७ ई० में औरँगजेब आगरे के सिंहासन पर बिराजमान होगया। शिवाजी भी औरंगजेब को

खूब समझता था उसने औरङ्गजेब के सिंहासनाधीश होते ही उनसे पत्रव्यवहार आरम्भ किया। औरङ्गजेब ने शिवाजी ऐसे विपक्षी से सँधि करना ही उचित समझा और बड़ी प्रसन्नता से आज्ञा दे दी कि जो कुछ इलाका शिवाजी ने बीजापुर की रियासत से छीन लिया है वह उसी के पास रहे और साथ ही यह प्रकट किया कि दावल और समुद्र के किनारे के अन्य मुकामों को भी शिवाजी अपने अधीन कर ले। यों तो बीजापुर के राज्य को शक्तिहीन करनेके लिये ऐसा किया गया परन्तु वास्तव में औरङ्गजेब शिवाजी को गिरफ्तार करने की चेष्टा में लगा रहा। इसने अनेक युक्तियाँ रड़ाई, बीसों तर्कीबें मिलने की कीं, परन्तु शिवाजी हाथ न आया, अलग ही रहा। उसने यह भी प्रकट कर दिया कि वह मुग़ल सम्राट् से भी दो हाथ करने को तय्यार है।

मई सन् १६५७ ई० में उसने रात के समय नीर शहर को (जो मुगलों के इलाके में था) घेर लिया और खूब लूटा। यहाँ से उसको तीन लाख पोगड़ा करन घड़े और बहुत से अमूल्य वस्त्र तथा अन्यान्य चीजें हाथ आईं जो उसने तत्काल ही पूना और राजगढ़ भेज दी। शिवाजी स्वयं ऐसे मार्ग से जिसपर बहुत आदमी नहीं चलते थे अहमदनगर पहुँचा और उसको लूटना आरम्भ कर दिया परन्तु किले की सेना के सावधान होने पर ७०० घोड़े और ४ हाथी लेकर शहर से बाहर निकल गया। पूना पहुंच कर उसने अपनी सेना को बढ़ाना आरम्भ किया। बहुत से घोड़े खरीदे और सवारों को नौकर रक्खा, मानक जी को जो उसके पिता का एक विश्वस्त नौकर रह चुका था फौज का अफसर किया। और एक अन्य लोकप्रिय मरहठा शिरोमणि नेताजी पालकर को भी अपने साथ ले लिया। शिवाजी उस महती शक्ति के विरुद्ध अपने

भाग्य की रक्षा करने लगा कि जो सौ वर्ष से भी अधिक से भारत की अधिपति चली आती थी, जिसकी राज्यगद्दी पर कि आज औरङ्ग जैसा नृशंस और कपटी बैठा हुआ था। यद्यपि शिवाजी प्रबन्ध तो करने लगा था परन्तु मन में निश्चय कर लिया था कि जब तक सामना करने की पूर्ण सामग्री न हो जाय सामना न किया जाय और चापलूसी की बातों से औरङ्गज़ेब को विमुख ही रक्खा जाय।

हम ऊपर लिख आये हैं कि जब शाहजी दरबार बीजापुर में कैद किया गया था तो शिवाजी ने शाहजहां को अपील की थी और शाहजहान ने उसको पांच सहस्र का पारितोषक दिया था। शिवाजी ने स्वीकार करने के स्थान कुछ प्रान्तों के विषय में अपने देशमुखी और चतुर्थांश के अधिकार पेश कर दिये थे। अन्ततो गत्वा शाहजहान ने प्रतिज्ञा की कि जब शिवाजी पांच सहस्र के पुरस्कार को स्वीकार करके दर्बार में आयगा तो इन अधिकारों पर भी विचार किया जावेगा। शिवाजी ने अब पुनः इस विषय में औरङ्गजेब के साथ वार्तालाप आरम्भ किया। वरन् बीजापुर के "आदिलशाह" के कुप्रबन्ध की नींव पर कोँगन प्रान्त पर स्वत्व जमाने की आज्ञा चाही तथा अपने पुराने अनुचर को पेश किया तथाच पहिले 'रघुनाथ' उसके पश्चात् 'कृष्णजी भास्कर' इसी अभिप्राय से वकीलों के ढङ्ग पर मुग़लिया दर्बार में भेजे।

"औरङ्गजेब" उस समय राजपूतों से लड़ रहा था उसने भी अहोभाग्य समझा कि शिवाजी की ओर से चिन्ता टल जाय। इसके बिना उसने यह भी सोचा कि यदि शिवाजी और "आदिलशाह" बीजापुरी परस्पर लड़ते रहेंगे तो दोनों में से कोई भी मुग़लिया-मण्डल पर हस्तक्षेप न करेगा, तथा

दोनों परस्पर एक दूसरे की शक्ति को क्षीण कर देंगे अतएव औरङ्गजेब ने शिवाजी को कोंगन प्रान्त पर अधिकार जमाने की आज्ञा दे दी। उसके वास्तविक अधिकारों के विषय में बालवी "सोनदेव" को दर्बार में भेजना निश्चित हुआ कि वह इसके विषय में चर्चा करे। शिवाजी को इसने आज्ञा भेजी कि वह पांच सौ सवार राजकीय सेना में भेज देवे तथा शेष सेना से राज्य मण्डल का प्रबन्ध स्थित रक्खे। शिवाजी तथा औरङ्गजेब दोनों एक दूसरे को खूब समझते थे किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह पत्र व्यवहार यहां तक रहा और इसके आगे इससे कोई फल नहीं निकला अर्थात् कोई प्रतिज्ञा विशेष इनके मध्य में नहीं हुई। शिवाजी ने कोंगन को प्राप्त करने के लिये तत्काल ही सामरिक प्रबन्ध आरम्भ कर दिये तथा समुद्र के तट पर बहुत से दृढ़ स्थानों को अपने कब्जे में कर लिया।

सामुद्रिक कार्यके लिये इसने कुछ बेड़े भी बनवाये। ७०० पठान सिपाही भी नौकर रक्खे। शिवाजी मुसलमानों को नौकर रखने के यद्यपि अति विरुद्ध था परन्तु "गामाजी" नायक ने जो कि इस के मामा का अत्यन्त बुद्धिमान तथा विश्वस्त नौकर था और उसकी मांके साथ शिवाजी की ओर आगया था उसको समझा बुझाकर सातसौ पठान नौकर रख लिये। जोकि वीजापुरकेच्युत कियेगये सिपाही थे 'राघोलाल' ब्राह्मण को इन पठानों का नायक नियत किया। शिवाजी के मन्त्रियों में से सब से उच्च अधिकार 'शामराजी पन्त' का था जिस को शिवाजी ने मुखिया का खिताब दिया था कोंगल की विजय प्राप्ति के लिये पुष्कल सेना एकत्रित करके उसको प्रबन्धकर्त्ता नियत किया। परन्तु परीक्षा से सिद्ध हो

गया कि शिवाजी का आर्थिक मुखिया सेना का मुखिया होने की योग्यता नहीं रखता था। तथापि उस मुखिया महाशय को बीजापुर की सेना ने पराजित किया जिससे कि शिवाजी को बहुत क्लेश हुआ, क्योंकि जिस दिन से शिवाजी ने हाथ में तलवार पकड़ी थी यह हार पहली हार थी, जो कि उसके भाग्य में आई। यद्यपि यह स्वयं इस पराजय का उत्तरदाता न था। अतएव 'शामराजीपन्त' को पीछे बुला लिया गया और मुखिया पद से पृथक् कर दिया गया। उसके स्थान पर 'रघुनाथपन्त' सेनाध्यक्ष नियत हुआ। रघुनाथपन्त' यद्यपि स्वयं रणभूमि से पीछे नहीं हटा था परन्तु अपने विरोधी को भी न हटा सका, अन्त को वर्षा ऋतु के आरम्भ हो जाने पर दोनों सेनायें संग्राम भूमि से हट गयीं। इस समय में एक और बलवान् शत्रु शिवाजी के सामने आया।

अफ़ज़लखान की घटना।

बीजापुर की राजधानी ने इस समय अनुभव किया कि शिवाजी को अधीन करना अत्यावश्यक है। अन्यथा हाथ से सम्पूर्ण देश के निकल जाने का सन्देह है। तथापि उन्होंने इस मुहिम के लिये बहुत बड़े प्रबन्ध आरम्भ किये। 'अफ़ज़लखान' ने (जो दर्बार बीजापुर का एक बहुत बड़ा पदाधिकारी था) इस सेना की सिपहसालारी के लिए अपनी सेवायें सम्मुख कीं और चलते समय भरे दर्बार में अत्यन्त अहङ्कार से यह कहा कि "मैं बहुत शीघ्र इस तुच्छ द्रोही को नग्न पांव दर्बार में उपस्थित करूँगा। अन्यथा उसका सिर काट लाऊँगा।" शिवाजी को यह सब समाचार पहुंच गये और उसने प्रतापगढ़ के दुर्ग (किला) में सामना करने की तैयारियाँ आरम्भ कीं। 'अफ़ज़लखान' ५००० सवार तथा ७००० पैदल

सेना, तोपखाना व अन्य सांग्रामिक सामग्री साथ लेकर चल पड़ा।

प्रतापगढ़ का दुर्ग उन दुर्गों में से है कि जो शिवाजी ने स्वयम् बनवाये थे। प्रतापगढ़ की स्थानिक अवस्था शिवाजी की बुद्धिमत्ता तथा विचारशीलता का प्रमाण देता है, दक्षिण के नितान्त सिरे पर यह दुर्ग एक महान मण्डल (इलाके) को सुदृढ़ करता है। पश्चिम में दरहघार के ऊपर है (जो कि दक्षिण से कोंगन जाने के लिये यथोचित मार्ग है) उत्तर में सावित्री नदी तथा दक्षिण के स्रोत हैं जो कि दुर्ग से कुछ ही मील दूरी पर 'महाबलेश्वर' के सदरों के समीप है। पश्चिम में कामना नदी बहती है तथा उसके तट इस दुर्ग की रक्षा में हैं। पश्चिम की ओर एक ऊँचा नीचा भाग पर्वती देश है जो कि कोंगन में जा मिलता है तथा ६० मील तक बल खाता हुआ समुद्र से मिल गया है। प्रतापगढ़ एक दुर्गम-पर्वतों की श्रेणी में उत्तर की ओर है। क़िले की इमारत भी अत्यन्त मज़बूत है। दोहरी तथा पक्की भीत उसके चारों ओर हैं चार मीनार (बुर्ज) भी हैं।

उत्तरीय दुर्ग में शिवाजी की भवानी देवी का मन्दिर है। और ऊपरी भाग में महादेव तथा पार्वती का मन्दिर है। शिवाजी के अपने निवास का स्थान भी इसी में ही है जो कि थोड़े ही व्यास में है। शिवाजी इस दुर्ग में ही था कि उसे सामने से दक्षिण की घाटी में अफ़ज़लखां की असंख्य सेना दिखाई दी उसके आगे जो कुछ भी घटना हुई उस विषय में निरीक्षक लोगों का मत भेद है। एक ओर यवन लोग (जो कि इतिहास लेखक हैं) इस बात पर सहमत हैं कि शिवाजी ने जभी अफ़ज़लखां की सेना को देखा, त्यूं ही डर गया और उसने समझा कि ऐसी पुष्कल सेना से सामना करना निष्फल

है। इस लिये उसने अत्यन्त चापलोसी से सन्देशा भेजा और अत्यन्त दरिद्रता तथा नम्रता से क्षमा प्रार्थी हुआ। जिस पर अफ़ज़लखाँ ने एक गोपीनाथ नामी ब्राह्मण को शिवाजी के पास भेजा और कहला भेजा कि यदि शिवाजी आधीनता स्वीकार करेगा तो 'अफ़ज़लखां' का जिम्मा होगा कि वह शिवाजी को राजा से मिलाकर न केवल क्षमा ही करा देवे किन्तु इस आधीनता के प्रत्युपकार में जागीर में भी अधिकता करा देवे। शिवाजी ने उस ब्राह्मण को लालच देकर तथा धर्म की दुहाई से भरमा लिया और उसके साथ यह सम्मति की कि किसी प्रकार 'अफ़ज़लखां' को एकाकी शिवाजी से मिलावे तथाच यह प्रस्ताव किया गया कि 'अफ़ज़लखां' को सन्देश भेजा जावे कि यदि आप निस्सन्देह सच्चे हैं और आपकी भावना में किसी प्रकार का भी पाप नहीं है तो स्वयमेव एकाकी दुर्ग के समीप आकर मुझ से मिलिए और शपथ खाइए कि आप मुझ से वञ्चना अथवा धोखा नहीं करेंगे। मुसलमान निरीक्षक कहते हैं कि ऐसा सन्देश उस ब्राह्मण द्वारा भेजा गया और 'अफ़ज़ालखां' ने इस बात को मान लिया तथा एकाकी उस स्थान को चला गया जो कि शिवाजी ने सङ्गम के लिये अपने दुग के नीचे नियत किया था। जब 'अफ़ज़लखां' बग़लगीर होने को आगे बढ़ा तो शिवाजी ने (जो सुसज्जित था) अपने जातीय शस्त्र कछुवे से उसका पेट फाड़ दिया और तलवार से सब काम तमाम करदिया और अफ़ज़लखां' के साथ जो थोड़े से मनुष्य आये थे और कुछ दूरी पर रुक गये थे उनको मराटे लोगों ने जो कि घात लगाये बैठे थे आ लिया और सम्पूर्ण सेना में कोलाहल मचगया। जोर कटु-शब्द यथा क़ाफ़िर, चूहा, कुत्ता इत्यादि मुसलमान लेखकों ने

लिखे हैं और पूर्वीय भूलसे किंवदन्तियां शिवाजी की लल्लोपत्तो तथा चालों की लिखी है वे स्वयं इस बात का पर्याप्त प्रमाण हैं कि मुसलमान निरीक्षकों की सम्मति पक्षपात शून्य नहीं है। संदेह की अवस्थामें प्रत्येक लेखकने अपनी ही कल्पना घटन्त से काम लेकर कोरी कल्पना द्वारा ही झूँठे चित्र खींचे हैं यह भी याद रखना चाहिये कि (अङ्गरेज़ लेखक स्टाक साहिब ने लिखा है) हिन्दुओं के विषय में साधारणतया तथा मराठों के विषय में विशेषतया मुसलमान लेखकों के सम्पूर्ण लेख प्रायः ऐसे ही भूलों और पक्षपातों से भरपूर हैं। स्टाक देङ्ग लिखता है कि मुसलमानों के इतिहास के मुक़ाबिले में मराठों के इतिहास अधिक विश्वास के योग्य हैं। अतएव सम्पूर्ण मराठा लेखक इस विषय में सहमत हैं कि शिवाजी ने 'अफ़ज़लख़ां' को आत्म-रक्षा के लिये मारा, यह नहीं कि शिवाजी उससे मिलने की इच्छा करता वह स्वयम् उत्कण्ठित था कि शिवाजी को अपने मेल के जाल में फँसा कर हनन करे। शिवाजी शरीर में दुबला और अफ़ज़लख़ाँ बड़ा मोटा हृष्टपुष्ट तथा सुदृढ़ पठान था अफ़ज़लख़ाँ शिवाजी की सत्ताको कुछ नहीं समझता था और उसे पूर्ण विश्वास था कि यदि शिवाजी एकाकी मेरे सम्मुख आवेगा तो मैं उसे कतल कर डालूंगा। दरबार से प्रस्थान करते समय अफज़लखाँ ने अत्यन्त अभिमान से यह कहा था कि "वह शिवाजी को पकड़ लायगा" इस लिये उस ने अपने ब्राह्मण को शिवाजी के पास भेजा कि वह उसे एकाकी मिलने के लिये उद्यत करे तथा उस के द्वारा यह कहला भेजा कि यदि वह अधीनता स्वीकार करेगा तो उस के लिये अति उत्तम होगा। शिवाजी को भी दूतों ने यह समाचार दे दिया कि अफजलखाँ की भावना दुष्ट है और उस को इच्छा शिवाजी को फँसाने की है

तथापि अफज़लखाँ के दूत (उसी ब्राह्मण) को जब धर्म की शपथ दी गयी तो उसने सम्पूर्ण वृत्त ठीक २ कह दिया। शिवाजी ने भी सोचा कि भाग्य परीक्षा करनी चाहिये और मिलने के लिये स्वीकृति देदी। अन्ततो गत्वा सङ्गम के लिये स्थान आदि नियत हो गया। शिवाजी पूर्णतया उद्यत होकर प्रस्थित हुआ और उसने काशी तथा गयाजी को पिण्ड आदि के लिये ब्राह्मण भेज दिये तथा स्वयम् पूजा करके शस्त्र बाँधे एवं भीतर सज्जो पहिना उस के ऊपर साधारण सीधा अङ्गरखा पहिना, अभिप्राय यह कि शिवाजी प्रत्येक प्रकार से मृत्यु के लिये उद्यत होकर अपने विश्राम भवन से निकला।

जिस समय अफज़लखाँ शिवाजी से बगलगीर हुआ उस समय पठान ने शिवाजी का माथा अपने हाथ में पकड़ कर दबाना आरम्भ किया और तलवार मियान से निकाल कर शिवाजीपर चलाई परन्तु वहां तो सज्जो आदि लगाई हुई थी इस लिये वह कारगर न हुई। उधर शिवाजी ने अत्यन्त चातुर्य्य से बाँयें हाथ से बिछुआ अफज़लखाँ की अन्तड़ियों में धकेल दिया। अफज़लखाँ वहीं ढेर हो गया इस का शरीर एक पहाड़ पर दबा दिया गया तथा उस के सिर के ऊपर एक बुर्ज बनाया गया जो कि अभी तक "अब्दुल्ला का मीनार" प्रसिद्ध है। (अफज़लखाँ का वास्तविक नाम अब्दुल्ला था।

विचार में यह आता है कि मरहठा लेखकों का वर्णन इस विषय में खाफ़ीखाँ के इस लेख की अपेक्षा सत्य तथा ठीक है जिसको पढ़ते ही तत्काल निश्चय हो जाता है कि वह पक्ष-पात से पूरित तथा झूठा है, क्योंकि सम्भव नहीं कि इस सलूक के पश्चात् (जो कि शिवाजी के साथ दर्बार बीजापुर

की ओर से बर्ताव में आया था और उस विरोध के पश्चात् जो कि शिवाजी ने बीजापुर के राज्य के विरुद्ध खड़ा किया हुआ था) अफ़ज़लखाँ शिवाजी पर पूर्ण विश्वास करके युद्ध भावना से इस प्रकार अपने आपको शत्रु के हाथ में फँसा देता। दर्बार बीजापुर ने शिवाजी के पिता को कैद करके उनसे अत्यन्त दुष्ट बर्त्ताव किया था। इसके बिना अफ़ज़लखाँ इसी प्रस्थान तथा आक्रमण के मार्ग में सम्पूर्ण मन्दिरों को विध्वंस तथा नष्ट भ्रष्ट करता आया था अफ़ज़लखाँ ने ही शिवाजी के पुत्र शम्भाजी को अत्यन्त वञ्चन तथा धोके से कतल किया अफ़ज़लखाँ जानता था कि शिवाजी कट्टर हिन्दू हैं और उसे अपने धर्म की मान हानि तथा अपने देवताओं के अनादर से अत्यन्त दुःख होता है और ईश्वर ने उसके भीतर प्रतीकार की शक्ति भी कूट २ भरी है तो फिर हम किस प्रकार निश्चय कर लें कि अफ़ज़लखाँ ऐसा साधारण मनुष्य था कि इन सम्पूर्ण घटनाओं के होते हुए भी बिना किसी प्रकार की दुष्ट भावना के एकाकी एक प्रसिद्ध केहरी की कन्दरा में जा घुसा। किन्तु यदि हम विचारार्थ यह भी मान लें कि ऐसी घटना हुई और शिवाजी ने वञ्चना से अफजलखाँ को कतल किया तो भी कुछ आश्चर्य का स्थान नहीं क्योंकि उस समय में शत्रु को इस प्रकार से मार लेना मुसलमानों में भी मन्द नहीं गिना जाता था। औरङ्गजेब ने इसी प्रकार के व्यवहारों से देहली के राज्य सिंहासन पर अधिकार जमाया था और शिवाजी का पुत्र शम्भाजी इसी प्रकार मारा गया था इस घटना से कुछ दिन पूर्व बीजापुर का राज मन्त्री आज़मखाँ भी इसी प्रकार मारा गया था तथा उस का पुत्र "ख्वासखाँ" भी पश्चात् इसी प्रकार से मरा। स्वयं औरङ्ग-जेब ने इसी भावना से शिवाजी को देहली में बन्दी किया था।

भाव यह कि भारत का इतिहास ऐसी घटनाओं से भर रहा है कि मुसलमानों के युद्धशासन के अनुसार इस प्रकार शत्रु का मारना पाप नहीं समझा जाता था जैसा कि वर्तमान काल में समझा जाता है। राजपूतों का युद्धशासन तो अपनी पवित्रता, पुरुषार्थ तथा वीरता में सब जातियों से उच्च है। धोका तथा वञ्चना तो कहां राजपूतों ने घिरे हुए शत्रु को मारना वीरता से बाहर समझा अन्यथा उन्हें कई बार ऐसे अवसर मिले कि वे भारतवर्ष में यवन राज्य का अन्त्येष्टि कर्म कर देते।

अफ़ज़लखाँ के मरते ही सम्पूर्ण सेना में कोलाहल मच गया और मराठों ने रक्त में हाथ रंगने आरम्भ किये। सम्पूर्ण इतिहास वेत्ता इस विषय में सहमत हैं कि शिवाजी ने इस मार धाड़ से नितान्त अप्रसन्नता प्रकट की और तत्काल आज्ञायें निकालीं कि यथासंभव किसी के साथ भी लड़ाई न की जाय। शिवाजी क़ैदियों के साथ सदैव अत्यन्त कृपा तथा दया से बर्त्ताव किया करता था। इस अवसर पर भी जिन मनुष्यों को शत्रु की सेना ने गिरफ़्तार किया था उनके साथ शिवाजी अत्यन्त दया और अनुग्रह से पेश आया। बहुत से लोगों ने इसी अनुग्रह के कारण उसकी नौकरी कर ली। 'झुझरराय घाटगा' एक बड़ा मान्य मराठा था जो कि किसी समय में शाहजी का परम मित्र रह चुका था, शिवाजी उसे इस बात पर उद्यत न कर सका कि वह बीजापुर की नौकरी छोड़ शिवाजी की नौकरी करे। परन्तु फिर भी शिवाजी ने उसको बहुत सा पुरस्कार देकर विदा किया। अपनी सेना के चोट खाये वीरों को तो उसने बहुत सी बहुमूल्य वस्तुयें (सोने के हार तथा सोने चाँदी की जंजीरें आदि) भेंट कीं और साधारणतया अपनी सेना को अत्यन्त प्रसन्न किया

जिससे कि उनका उत्साह द्विगुणित हो गया। अफ़ज़लखाँ की तलवार इस समय तक शिवाजी के वंश जो कोल्हापुर में राज्य करता है उसमें चली आती है। इस विजय ने शिवाजी की शक्ति बहुत अधिक करदी और थोड़े ही समय में उसने कुछ अन्य दुर्गों पर भी कब्ज़ा कर लिया। बीजापुर के दरबार ने अफ़ज़लखाँ की मृत्यु का समाचार पाकर 'रुस्तमेज़माँ' को आज्ञा दी कि वह कोल्हापुर के बचाव के लिये आगे बढ़े परन्तु शिवाजी ने उसे भी आक्रमण करके परास्त कर दिया, उसकी सेना का कृष्णा नदी के उस पार तक पीछा किया।

इसके पश्चात् शिवाजी ने सीधा * राजपुर का मार्ग लिया और वहाँ से कर भेंट लेकर 'बहिल' पर कब्ज़ा किया यहां से उसे बहुत सा धन और सम्पत्ति प्राप्त हुई जो कि उसने राजगढ़ को भेज दी। जब राजा को समाचार मिला कि विजय पर विजय प्राप्त करता नगरों तथा ग्रामों को स्वायत्त करता वह राजधानी तक चला आ रहा है तब तो मुसलमान रजवाड़ों के कान खड़े हुए और सामना करने की तय्यारियां होने लगीं। "हबशी गुलाम सीदी जौहर" को आज्ञा मिली कि अफ़ज़लखाँ की सेना से द्विगुणित सेना लेकर शिवाजी का सामना करे। अफ़ज़लखाँ का पुत्र फ़ाज़लखाँ जो कि अपने पिता की मृत्यु का बदला लेना चाहता था साथ हो लिया दोनों को आज्ञा मिली कि 'पनाला दुर्ग' (जो हाल में ही शिवाजी ने प्राप्त किया था) पर आक्रमण करें। दूसरी ओर से फ़तहखाँ को आज्ञा मिली कि वह कोंगन में शिवाजी की स्वायत्त भूमि पर आक्रमण करे और 'बारी देश मुख' के सरदारों के नाम भी आज्ञा पत्र लिखे गये। 'सदी जौहर' को 'सलाबतखां' की पदवी दी गई। अस्तु। शिवाजी ने भी

---

* राजपुर में अंगरेजों की भी बस्ती थी।

सामने की तय्यारी को रघुनाथ पन्त फतहखाँ के सामने के लिये निर्वाचित किया गया। अब्बाजी सोन देव कल्याण भमेरा के दुर्ग तथा प्रान्त की रक्षा के लिये छोड़ा गया भार्जीराऊ फलकर को आज्ञा मिली कि बारी के 'सावन्त' लोगों से लड़े। पूर्णधर संगर व प्रतापगढ़ और उसके आस पास की भूमि मोरोपन्त के सुपुर्द हुई। स्वयं शिवाजी पनाला के दुर्ग में सुरक्षित हो गया। उसने बीजापुर की सेना को आगे आने से नहीं रोका परन्तु जब सेना दुर्ग के समीप आकर स्थित हो गई तो 'नेता जी पालकर' ने आस पास के प्रान्तों को उजाड़ना आरम्भ कर दिया और यत्न किया कि शत्रु की भोजनादि सामग्री बन्द हो जाय। मावला लोगों ने आपर्वतों एवं घाटियों से निकल कर शनशः शत्रुओं का विध्वन्स कर दिया। यद्यपि शिवाजी के साथियों ने इस प्रकार से शत्रु की पुष्कल हानि कर दी परन्तु सीदी जौहर धैर्य से वहां डटा रहा।

उधर कोंकन में भी लड़ाई होती रही और कुछ समयतक मुसलमानों का लाभ हुआ। 'बाजीराव फलकर' भी बारी के शिरोमणि को आधीन न कर सका। इस पिछली लड़ाई में दोनों ओर के अध्यक्ष खेत रहे। परन्तु दोनों ओर की सेना ने हार न मानी। हा शोक !! कितने योद्धा और वीर अपने भाइयों के हाथ से मारे गये। काश, कि कोई उनको समझाता कि अपने भाइयों का विध्वंस करना (भाई भी कैसे जो धर्म युद्ध करते तथा निर्दयी शत्रुओं के हाथसे अपनी भूमि छुड़ाना चाहते थे) महान् पाप है। हा दुर्भाग्य ! भारतवर्ष के इस भीतरी संग्राम ने 'तरावड़ी' के मैदान पर हिन्दू राज्य की समाप्ति कर दी। इस भीतरी संग्राम ने पीछे भी कई एक समाक्रमणिक मुसलमानों को भारत के लूटने का अवसर

दिया। इसी भीतरी संग्राम ने हिंदुओं को जातीय अवस्था से च्युत कर दिया। इसी भीतरी संग्राम ने मराठों की अवनति की। शिवाजी के हाथ के लगाये हुए पौधों को मूलोच्छेद कर दिया। इसी पारस्परिक संग्राम ने सिक्खों का नाश किया। तथा अब भी यही परस्पर का संग्राम हिंदुओं की उन्नति तथा पारस्परिक प्रेममें बाधक है। काश ! कोई आकाशवाणी ही इन्हें इस संग्राम की हानियाँ समझाकर इससे बचाये।

शिवाजी को जब यह समाचार मिला तो उस ने समझा कि मैंने बड़ी भारी भूल की जो इस प्रकार दुर्ग में घिर कर बैठ गया। घेरे को चार महीने होगये थे यद्यपि इस समय तक शत्रुके आक्रमण करनेका कोई अवसर नहीं आया था परन्तु शत्रु फिर भी डटा और सचेत था। अन्त को शिवाजी ने एक चाल चली। अर्थात् मिलाप के लिये बातचीत चलाई गई। लड़ाई दोनों ओर से बन्द होगई। अभी उत्तमतया मिलाप न होने पाया था तथा सम्पूर्ण नियम भी निश्चित न हुये थे कि रात को शिवाजी कुछेक वीर साथियों सहित दुर्ग से निकल पड़ा। और पर्वत से निकल सीधा जङ्गल का मार्ग लिया। शिवाजी पूर्ण उत्तेजना से 'अङ्गना' की ओर प्रस्थान कररहा था कि विरोधियों को इसके बचकर निकल जाने का समाचार मिल गया। तत्काल ही फ़ज़िल मुहम्मदखाँ और सैदी जौहर, का पुत्र सैदी अजीज पीछा करने को गये परन्तु विचारशील शिवाजी पूर्व ही इस का प्रबन्ध कर गया था। अर्थात् शिवाजी इस आपत्ति को काटनेके लिये अपने मावला सिपाहियों का एक समूह मार्ग में छोड़ गया था, जिस का प्रबन्ध उस ने अपने अतीत शत्रु बाजीपरबो देश पाण्डे को दे दिया था। जब पीछा करने वाले मुसलमान पहुंचे तो उन के साथ सेना अधिक थी तथा मराठे अपनी संख्या में बहुत कम

थे शिवाजी की उन्हें आज्ञा थी कि जबतक (हमारी ओर से) पांच गोलियाँ न चलें तब तक लड़ते रहना और जब अमुक दिशा से लगातार पांच गोलियाँ चलजायें तो समझ लेना कि मैं सुख से दुर्ग में पहुंच गया। देश पांडे और उसके मावला साथी अत्यन्त वीरता से लड़ते रहे आधे के लगभग मारे गये परंतु फिर भी शत्रु को मार्ग नहीं दिया यहाँ तक कि देश पांडे भी मारा गया। यह अभी गिरा न था कि गोलियों का शब्द सुनाई दिया अतएव देशपांडे ने निश्चिन्त हो कर प्राण दे दिये। देशपांडेके वीर सिपाहियों ने उस की देह को भी वहां न छोड़ा और असंख्य शत्रुओं के मुकाबले में देह को लेकर भाग निकले।

इस कार्य्यवाही से 'सैदी जौहर' की जब सब तरकीबें खाक में मिल गयीं तो वह इस उधेड़बुन में पड़ गया कि पनाला के घेरे पर स्थिर रहे अथवा शिवाजी के पीछे जाय। उधर जब राजा को यह समाचार मिला तो उस ने 'सैदी जौहर' पर यह दोष लगा दिया कि उस ने शिवाजी से घूंस (रिशवत) लेली है। सैदी जौहर ने इसका अत्यन्त क्रोध-युक्त उत्तर दिया जो कि अनादर सूचक माना गया। अन्त में बादशाह स्वयं संग्राम के लिये निकले। पनाला का दुर्ग पावनगढ़ तथा आस पास के दुर्ग जो शिवाजी ने ले लिये थे अङ्कना तथा विशालगढ़ के बिना सब राजा के हाथ आगये इतने में वर्षा आरम्भ हो गई बादशाह ने कृष्णा नदी के किनारे चमलगे स्थान पर अपना कैम्प लगाया। शिवाजी ने यद्यपि राजा का सामना नहीं किया परन्तु फिरभी वह चुपचाप नहीं रहा। वर्ष के प्रारम्भ में वह राजापुर के सम्मुख जा प्रकट हुआ और उसने उस नगर को लूटा इस अवसर पर अङ्गरेजों

की भी कुछ हानि हुई और कई एक कारखाने वाले पकड़ कर कैद किये गये। शिवाजी को इन पर सन्देह हो गया था कि इन्होंने पनाला के घेरे में शत्रु को बारूद से सहायता दी थी। शिवाजीको क्या ज्ञान था कि शीघ्रही ये अङ्गरेज व्यापारी सम्पूर्ण भारतवर्ष के स्वामी बन जायेंगे तथा शिवाजी की सन्तान उसके अधीन एक कर देनेवाले साधारण मण्डलेश से अधिक अवस्था वाली न रहेगी। उसे यह ज्ञान न था कि यवन राज्य के विध्वंस से उसकी जाति को लाभ न होगा किंतु एक अन्य ही जाति उसके विध्वंस से लाभ उठाकर यवन सिंहासन की स्वामिनी होगी। राजापुर से निकलकर शिवाजी ने एक हिन्दू राजा 'दलवी' की आयत्त (भूमि) पर आक्रमण किया, और 'शुरङ्गापुर' उसकी राजधानी पर स्वत्व करलिया 'दलवी' की हिन्दू प्रजा ने शिवाजी के इस कृत्य को पसन्द न किया और मण्डल छोड़ छोड़ कर जाने लगे। शिवाजी ने एक प्रसिद्ध वंशीय 'सद्रवे' नामक सरदार को समझाकर वापिस बुलाया और उसके साथ बहुत सी हिन्दू प्रजा लौट आयी इसी वर्षा ऋतु में उसने प्रतापगढ़ में एक मन्दिर बनवाया और रामदास स्वामी को अपना गुरु बनाकर पूजन में संलग्न हो गया। परन्तु उसका पूजन ऐसा न था जो उस की सांग्रामिक कार्यवाहियों अथवा उसकी देश प्राप्ति में अवरोधक होता। वर्षा भर फ़तहखाँ के पीछे रहा और कई स्थान आयत्त कर लिये। बीजापुर के दर्बार की सुनिये। बादशाह एक और संदेह में पड़ गया। हमने ऊपर लिखा है कि राजा को सैदी जौहर पर 'घूँस' लेने का सन्देह था अतएव राजा की तथा उसकी बिगड़ गई। अन्त को राजा स्वयम् रण में आया तो 'सैदी' ने क्षमा माँगी। यद्यपि उसका अपराध क्षमा कर दिया गया परन्तु वह भय से सामने न आया और

अपनी जागीर में चला गया। जब राजा कृष्णा के तट पर स्थित था तो उसने सैदी जौहर को बुलाया। यद्यपि सैदी आया और वंदन आदि करके चला गया परन्तु 'इबराहीमखाँ' राजा का मंत्री उसका अत्यन्त शत्रु था इसलिये उसको राजा की ओर से खटका लगा रहा। इसी समय कर्नाटक में कुछ फ़साद हुआ और कुछेक विद्रोही खड़े हो गये। राजा स्वयम् शिवाजी के पीछे जाना चाहते थे परन्तु जब 'सैदी' की ओर से उन विद्रोहों के मिटाने की रुचि न पाई गई तो राजा को सैदी पर यह संदेह हुआ कि वह भीतर ही भीतर शिवाजी से कुछ सम्बन्ध रखता है। तथाच मन्त्रियों की सम्मति से बादशाह शिवाजी पर आक्रमण न कर स्वयम् कर्नाटक की ओर बढ़ा। 'बहिलोलखाँ' और 'बाजीघोरपरे' को आज्ञा हुई कि देशमुखों की सहायता से शिवाजी पर आक्रमण करें। सेना एकत्रित हो रही थी कि 'बाजीघोरपरे' किसी कार्य्य के लिये अपनी जागीर में गया। शिवाजी को सब समाचार पहुंचते थे क्योंकि 'बाजी' वही मनुष्य था जिसने कि छल से शिवाजी के पिता को कैद करके बीजापुर को दे दिया था। शिवाजी इसी चिन्ता में था कि उससे बदला ले। उसने यह अवसर उत्तम समझ बाजी पर आक्रमण किया और उसे बहुत से सम्बन्धियों सहित हनन किया और "मौधल" को लूट कर फुरती से विशालगढ़ में आ गया। राज्य दर्बार की ओर से शिवाजी के स्थान पर 'ख्वासखाँ' को नियत किया गया। परन्तु थोड़ी देर पीछे सम्पूर्ण सेना (जो कि शिवाजी के सामने के लिये नियत थी) पीछे बुला ली गई। और बीजापुर के दरबार ने शिवाजी के पिता द्वारा मिलाप कर लिया। शाहजी बाजी की मृत्यु सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और वह अपने सुपुत्र को मिलने के लिये कर्नाटक से इधर

आया। शिवाजी भी अपनी जाति की प्रथानुसार कुछेक मील आगे अपने पिता की अगवानी के लिये गया और घोड़े पर से उतरकर आदरपूर्वक वन्दन किया।

इस समय शिवाजी के पास पचास सहस्र पैदल और सात सहस्र सवारों के लगभग सेना थी। चारों ओर उसकी धाक थी। न केवल बीजापुर का राज्य इससे कम्पायमान था प्रत्युत मुग़लिया चक्र तथा पश्चिमी बस्तियाँ भी उससे कम्पायमान थीं शिवाजी ने न केवल पार्थिव संग्राम में ही किन्तु सामुद्रिक संग्राम में भी नाम पा लिया था। सामुद्रिक संग्राम के लिये उसने एक 'बेड़ा' बनवाया था और 'कुलावा' को बन्दर निश्चित करके जल के मार्ग से भी शत्रु को सताना आरम्भ कर दिया था। पुर्त्तगाल वालों ने तो भेंट पूजा देकर मित्रता कर ली। बीजापुर के सम्राट् से मित्रता करके अब शिवाजी ने मुग़लिया राज्य की ओर ध्यान दिया।

मुग़ल वंश का सामना।

शिवाजी ने बीजापुर से अवकाश पाकर अब मुग़लिया राज्य से सामना करने की ठानी। एक पुष्कल सेना एकत्रित करके उसके दो भाग किये, पैदल सेना का अध्यक्ष तो 'मोरद्पंत' को बनाया तथा रिसाले की बाग 'नेताजी पालकर' को दी।

'नेताजी पालकर' को आज्ञा मिली कि मुग़लिया मण्डल पर आक्रमण करके उसे निष्कण्टक करना आरम्भ करे और नेताजी औरङ्गाबाद तक लूट खसूट करके फिर पूना को लौट आया। जब औरङ्गजेब को यह समाचार मिला तो उसे अत्यन्त क्रोध आगया और शायस्ताखाँ मुखिया को आज्ञा मिली कि तत्काल ही एक महती फ़ौज साथ लेकर इस उजड्ड

कि सङ्गरह के क़िले से शाम को चला था रात को २५ मावलियों और अफ़सरों सहित चुपके से उस जलूस में (जो कि बाजार में चक्कर लगा रहा था) आ मिला, जब सब लोग सो गये तो शिवाजी और उसके साथी जो कि दादा जी के मकान की ईंट ईंट से परिचित थे कुल्हाड़ियां लेकर रसोईखाने के ऊपर चढ़ गये और वहां से उन्होंने अन्दर घुसने का मार्ग बनाया परन्तु कुछ शब्द होने से ख़ान की स्त्रियों में कोलाहल मच गया और उन्होंने ख़ान को जगाया शायस्ताख़ाँ शीघ्रता से एक खिड़की में से नीचे उतर रहा था कि उसके हाथ पर घाव लगा और उसकी १ अँगुली कट गई। यद्यपि वह आप तो बिना किसी प्रकार की हानि के बच गया परन्तु उसका लड़का अब्दुलफ़तहख़ाँ और उसके बहुत से सिपाही मारे गये। पूर्व इसके कि शाही सेना शहर में घुसे शिवाजी और उसके साथी शहर से बाहर निकल गये। जब तीन चार मील जा चुके तब उन्होंने मशालें जला लीं मानो वे शाही सेना को जो सामने पड़ी थी दिखला रहे हैं कि हम कैसी प्रसन्नता से बिना किसी चिन्ताके मशालों की रोशनी में आनन्द लेते हुये अपना काम करके वापिस जा रहे हैं।

शिवाजी का यह काम उसके जीवन के बड़े २ कारनामों में गिना जाता है और क्यों न हो जब कि सारी शाही सेना सामना करने के लिये शस्त्र बन्द हो और शिवाजी पच्चीस मनुष्यों को सङ्ग ले शायस्ताखाँ के घर में जा घुसे और मार काट करके बिना किसी प्रकार की हानि के मशालों की रोशनी में गाजता हुआ अपने किले में आ जाय। यह एक ऐसा कारनामा है जो फुरती से भरे हुये वीर के हिस्से में आया है। प्रातःकाल मुग़लिया सेना का रिसाला किले की

और बढ़ा और बड़े अहङ्कार से आगे बढ़ता चला गया जब यह इतना समीप आपहुंचा कि भागकर भी तोप की चोटों से बचना कठिन होगया तो किले से तोपें चलनी आरम्भ होगईं बेचारे मुग़लिया रिसाले को भागने के सिवा और कुछ भी न सूझा। मराठा सरदारों ने जो कि पहाड़ियों में छिपे हुये थे बहुत दूर तक पीछा किया और बहुत सी मार काट करके लौट आए।

शायस्ताखाँ इन पराजयों से ऐसा मुर्दा दिल होगया कि उत्साह छोड़ जसवन्तसिंह ही की शिकायतें करने लगा। पहले तो औरङ्गजेब ने इन दोनों को वापिस बुला लिया और उनके स्थान पर राजकुमार "मुअज्ज़म" को नियत किया परन्तु फिर शायस्ताखाँ को बंगाले का शासन देकर जसवन्तसिंह को मराठों के मुकाबले के लिये मुअज्ज़म के पास भेजा परन्तु वह राजपूत वीर भी शिवाजी को अपने पहाड़ी किले से निकालने में सफल मनोरथ न हुआ अन्त को लाचार होकर अपनी सेना का कुछ भाग चाकन और जूनर पर छोड़कर शाही सेना को औरङ्गाबाद की ओर लौटना पड़ा।

उधर से निश्चिन्त होकर शिवाजी ने सोचा कि अब कुछ धन एकत्रित करना चाहिये क्योंकि इन लगातार आक्रमणों और घेरों से उसकी सेना को माल हाथ लगने का कोई भी अवसर नहीं मिला था। इसलिये उसने ऊपर से यद्यपि यह प्रसिद्ध करदिया था कि मैं नासिक के मंदिरमें दर्शनों के लिये जाता हूँ परन्तु चुपके से ४०००सवार लेकर जनवरी सन् १६६४ के आरम्भ में सूरत पर टूट पड़ा सूरत उन दिनों में दौलत से मालामाल था और अत्यन्त ही धनाढ्य नगरों में गिना जाता था। ६ दिन तक बराबर उसने इस शाही नगर को लूटा और

बहुत सा माल और धन लेकर अपने रायगढ़ के किले में जो कि उस समय ठीक बन चुका था और जिसको कि उसने बादको अपनी राजधानी बनालिया था आ विराजमान हुआ। अङ्गरेजों और डच वालों ने अपनी बस्तियों को बहुत मुश्किल से बचाया नहीं तो और भी बहुत सा धन हाथ आता। लौटने पर समाचार मिला कि उस का पिता शिकार खेलता हुआ घोड़े पर से गिर कर मर गया 'शाहजी' की मृत्यु सुन कर शिवाजी पिता की शव क्रिया में संलग्न हुआ। उससे निश्चिन्त होकर उसने कुछ दिन अपने राज्य प्रबन्ध में लगाये इस अवसर पर उसने अपने लिये राजा की पदवी तजवीज की और अपने नामका सिक्का चलाया इस प्रकारसे २० वर्षके अन्दर २ एक यवन राज्य के जागीरदारके होनहार लड़केने केवल बुद्धिमत्ता और ईश्वर प्रदत्त शक्ति एवं वीरता से अपने और अपनी जाति के शत्रुओं से लड़ भिड़ और मार काट करके एक हिन्दू राज्य की नींव डालदी और अपने आप को पहला हिन्दु राजा बनाया।

औरङ्गजेब जैसा बलवान सम्राट् बड़े बड़े वीर राजपूतों के सहायक होने पर भी इस नये उठते हुए सितारे की उन्नति का अवरोध न कर सका अवरोध करना तो एक ओर शाही सेना के मुकाबले में शिवाजी को बहुत से अवसर अपनी वीरता और बुद्धिमत्ताके दिखलाने के आये। शिवाजीने अपने शत्रुओं पर सिद्ध कर दिया कि जो मनुष्य मरने मारने के लिए उद्यत हो वह एक ऐसा बला का मनुष्य होता है कि जिससे बड़े २ राज्य भी भयभीत होते हैं और कभी कभी उखड़ भी जाते हैं। उसने अपने कर्मों से सिद्ध कर दिया कि १६ वीं शताब्दी के हिन्दुओं में भी कुछ महाभारत और रामायण के हिन्दुओं का रक्त शेष था, और यद्यपि सामान्यतया उनका रक्त

बिगड़ कर सड़ने लग गया था परन्तु फिर भी ज़रा सी चोट लगाने से ऐसा उबलता था कि ज्वालामुखी पर्वतों के समान जो सामने आता था उसे भस्मान्तर कर देता था। यदि आलस्य और प्रमाद में मग्न हो कर बैठ रहें तो मुद्दतों चूं न करें चाहे इधर का जगत उधर भी हो जाय। परन्तु जब एक बार सामना करने की ठान लें तो प्रलय कर दें।

गुस्से से गर हमारे माथे पै बल पड़ें।
तो शिर पै शिर हाथ पै हाथ तन पै तन चढ़ें॥
गादूं गिरे चढ़ायें जो हम आस्तीन को।
उस ही की तरह उल्ट दें सारी ज़मीन को॥

जिस प्रकार ज्वालामुखी पर्वत मुद्दतों के विकारों को अपने अन्दर लीन कर के अकस्मात् फूट पड़ता है और फिर अपनी भभक से आगा पीछा नहीं देखता इसी प्रकार दक्षिण भारत के वीरों में जो विकार दीर्घकाल से भरा हुआ था वह शिवाजी के रूप में फूट निकला जिस का फल यह हुआ कि जो भी मार्ग में आया भुलस गया और चारों ओर जहांभी शिवाजी ने मुँह उठाया अपना सिक्का जमा दिया।

शिवाजी ऐसा भोला न था कि वह इस प्रसन्नता में यह भूल जाता कि उसकी जाति का जानी दुश्मन औरङ्गजेब अभी तक उसकी ओर ताक लगा रहा है और कभी भी सम्भव नहीं कि वह शिवाजी को सुख से राज्य करने दे तिस पर भी तुर्रा यह कि शिवाजी के एक अफ़सर ने मक्का जाने वाले मुसलमानों का एक जहाज़ लूट लिया था और सम्पूर्ण यात्रियों का दण्ड के तौर पर पुष्कल धन लेकर छोड़ा था। देहली सम्राट् को कभी भी यह विचार न आया था कि यदि

मुसलमान सम्राट् हिन्दुओं से कर ले सकता है तो कदाचित् कोई हिन्दू राजा भी मुसलमानों से दण्ड लेने की शक्ति रखता है। यह सुन कर कि एक बेअदब और धूर्त मराठे ने मक्के को जाते हुये जहाज को लूट लिया है उसे अत्यन्त क्रोध आया और उसने शपथ खाई कि जब तक उस टेढ़े नेत्र वाले और अभिमानी हिंदू का सिर न काट लूँगा सुख की निद्रा न लूँगा। परंतु ईश्वर की रचना ईश्वर ही जानता है आखिर औरङ्गजेब भी सर्वशक्तिमान् तो था ही नहीं और न उसे सब बातों का ज्ञान था।

महाराजा शिवाजी के अन्य काम।

अगस्त सन् १६६५ ई० में शिवाजी फिर अपने शत्रु के मंडल को सर करने के लिये सवार हुआ पहले पटहन अहमदनगर को लूटा और फिर औरंगाबाद के आस पास को निष्कण्टक किया तथा च विजयपुर की सेना ने प्रतिज्ञापत्र को तोड़ कर कौंगन पर आक्रमण किया था इसलिये शिवाजी भी इसी जोड़ तोड़ में बिजली के समान कभी यहां कभी वहाँ जा गिरता था। उनके अङ्गरेज निरीक्षक लिखते हैं कि उसकी चेष्टायें ऐसी चुस्त और तीक्ष्ण थीं कि मानो प्रत्येक स्थान पर दिखाई देता था। लोग समझते थे कि शिवाजी दक्षिण को गया है परन्तु वह तत्काल उत्तर में जा निकलता। आज यहां कल वहां परसों फिर यहां भाव यह है कि ऐसी फुरती से फिरता था कि शत्रु चकित थे कि यह मनुष्य है अथवा भूत प्रेत। उसका समाचार प्रबंध ऐसा पूर्ण था कि उसके पास शत्रु के घर के समाचारों का अक्षर अक्षर पहुंचता रहता था।

सामने सारी शाही सेना पड़ी हुई है एक ओर विजयपुर की सेना धमकियाँ दे रही है आपने यह प्रसिद्ध कर दिया

कि हम शाही सेना पर आक्रमण करेंगे और अगले दिन झट पट अपने समुद्री बेड़े में (जिस में कि ८५ छोटी किश्तियाँ और तीन बड़े जहाज थे) सवार होकर बार्सीलोवर नगर में आ पहुँचा जो गवा की १३० मील निचाई में था। लूटखसूट के पश्चात् ४००० मनुष्यों का साथ ले किनारे से बहुत दूर जा निकला अब तो आप के शत्रुओं को भी ज्ञात हो गया कि मान्यवर अपनी राजधानी में नहीं हैं। फिर क्या था इधर उधर तलाश होने लगा आपके शत्रुओं को अभी पता भी नहीं लगा था कि महाशयवर बिजली के समान स्थल पर आ डटे और अपनी सेना को कई भागों में विभक्त करके शत्रुओं की भूमि को लूटने लगे। यहाँ तक कि कई एक धनाढ्य नगरों और व्यापारी स्थानों को लूट कर अपने रायगढ़ के किले में आ विराजमान हुये

शिवाजी की इस कार्य शैली के विषयमें इतिहास लिखने वालों की कुछ भी सम्मति क्यों न हो परन्तु इस में संदेह नहीं कि इनकी लड़ाइयों में जिस फुरती या चालाकी से शिवाजी ने यह लड़ाइयाँ कीं वह एक बड़ी असाधारण बुद्धिमत्ता और वीरता की साक्षी देती है। इतिहास में इस प्रकार की होशियारी के दृष्टान्त बहुत कम दिखाई देते हैं। उधर औरङ्गजेब को यह तमाम समाचार पहुँच रहे थे और उसको भी दिन रात चैन न आता था 'शल्लतो गरचा' उसने राजा जयसिंह राजपूत और "दिलेरखाँ" पठान को एक बड़ी फौज देकर शिवाजी को अधीन करने के लिये प्रस्थित किया। शिवाजी जब सामुद्रिक कामों से लौट कर आया तो देखा कि अब मुकाबले की ठन गई और औरङ्गजेब ने भी अपना बल परीक्षा का इरादा कर लिया है। सरदारों व अफसरों को रायगढ़ के किले में एकत्रित करके [illegible] करने लगा। एक दिन

महाशय को सन्देह होगया कि श्रीमती भवानी देवी (जिस की वह पूजा किया करता था) स्वप्न में यह बतला रही हैं कि शिवाजी! तेरे लिये इस हिन्दू सेनाध्यक्ष के मुकाबले में विजय प्राप्ति सम्भव नहीं तू निस्सन्देह आज तक मुसलमानों के मुकाबले में विजय प्राप्त करता रहा परन्तु आज तो तेरा ही भाई एक राजपूत तेरे मुकाबले में आ डटा है। शिवाजी! तुझको क्या मालूम था कि मक्कार औरङ्गजेब ने भी उसको इसी विचार से भेजा है कि या तो स्वयं रण में रहेगा अथवा तेरा नाश करेगा। सीधा परन्तु वीर राजपूत (जयसिंह) भी अपनी वीरता का सबूत दिखाने के लिये हिन्दुओं के उठते हुये राज्य का गला घोंटने आया है। यद्यपि इस पिछले विचार से वह जाति-शत्रु और देश-घातक है परन्तु इसके मारे जानेपर भी औरंगज़ेब की विजय है। इन निर्बल कर देने वाले विचारों ने वीर मराठा को जिसकी नसों में राजपूती रक्त किसी कदर बदल चुका था चिन्ता में डाल दिया। उसकी इस चिन्ता ने उसके सर्दारों के उत्साहों को भी ढीला कर दिया और सम्पूर्ण किले में मुर्दनी सी छा गई। अन्त को शिवाजी ने सोचा कि तलवार के स्थान में किसी अन्य ही विधि से काम लेना चाहिये। इसलिये उसने जयसिंह से सुलह के लिये बातचीत आरम्भ की।

रायगढ़ के पास राजा शिवाजी राजा जयसिंह से मेल मिलाप विषयक प्रतिज्ञा में संलग्न हैं और पूर्णधर में वीर मराठे दिलेरखाँ और उसके वीर पठानों को जानबाज़ी की शिक्षा दे रहे हैं उस मराठा अफ़सर का नाम जो कि किलेदार था 'वाजीप्रदो' था वाजी के अधीन मराठा सेना ने बड़ी उत्तमता से इस बात को सिद्ध कर दिया कि रण-भूमि से भागकर प्राणरक्षा करने अथवा युद्ध से घबड़ाकर भागजाने

या बिना किसी प्रकार का मुकाबला किये शस्त्र छोड़ देने अथवा किले को खाली कर देने का कलङ्क हमारे माथों पर लगाना सम्भव नहीं है ।

दिलेरखाँ किलेकी ओर बढ़ा उधर से 'बाजी' ने भी निर्भय होकर उत्साह व गम्भीरता से युद्ध की आज्ञा दे दी । किले के बाहर जितने भी स्थान सुरक्षित थे बहुत सी मार काट के पश्चात् हाथ से जाते रहे । अन्त को दिलेरखां ने आज्ञा दी कि जिस पहाड़ी पर निचले किले का बुर्ज है उसको सुरंग से उड़ा दिया जाय । किले की सेना ने कई बार अत्यन्त उत्साह और वीरता से सुरंग उड़ाने वालों को अपने स्थान से भगा दिया । परन्तु अन्त में उन्हें एक ऐसा आश्रय मिल गया कि वे गोली व बारूद की मार से बच कर अपना कार्य्य करने लगे । फिर भी उनको कई बार नाकामयाबी हुई । अन्त को उन के भाग्य ने सहायता दी और किले का बुर्ज उड़ गया । हमला करने वाले नीचे के किले में आ गये किले की सेना ऊपर के किले को जा रही थी कि उसने देखा कि शत्रुओं ने अपनी साधारण आदत से घरों को लूटना और स्त्रियों को पकड़ना आरम्भ कर दिया है मराठा वीरों को क्रोध आ गया और उन्होंने लक्ष्य बाँध कर गोलियों की बौछार आरम्भ कर दी । हमला करने वाले शत्रुओं के ढेर के ढेर गिर गये शेष सब ने जहां कहीं हो सका आश्रय लिया । उसी समय मावलियों का एक समूह अपने अफसर के आधीन उतर आया और तलवारें हाथों में खींच कर शपथ खाकर शत्रु पर आ पड़ा और जो सामने आया काट गिराया बचे खुचे अपनासा मुँह लेकर पीछे हट गये । दिलेरखां की सारी सेना पहाड़ी से नीचे आ गई क्यों कि मावली मराठे मृत्यु को हथेली में धरे हुए स्वयं मृत्यु की मूर्त्ति बन रहे थे दिलेरखां हाथी पर

सवार हुआ पहाड़ी के नीचे से सम्पूर्ण घटना देख रहा था और नीचे ही से अपनी सम्पूर्ण आज्ञायें चला रहा था।

उसने देखा कि यह तो बना बनाया काम बिगड़ा जाता है तो अपने साथी पठानों को लेकर पुकारता हुआ और उत्साह बढ़ाता हुआ आगे बढ़ा। जानबाज मराठे यह अच्छी तरह जानते थे कि यदि पूर्णधर का किला हाथ से जाता रहा तो दक्षिण से हिन्दुओं का नाम व निशान मिट जायगा; इसी लिये उन्होंने अपने प्राणों को हथेली पर धर कर काल भगवान् के समान दायें बायें काटना आरम्भ कर दिया। यहां तक कि लाशोंके ढेर लग गये। और वे क्षण क्षण में दिलेरखाँ के समीप पहुंचने लगे, दिलेरखाँ ने सोचा कि जब तक वीर शिरोमणि जीता है उस को आधीन करना या उस से जान बचाना असम्भव है। उसने लक्ष्य बाँध कर तीरों की बौछार आरम्भ की इन निर्दयी तीरों में से एक वीर बाजी की छाती में से निकल गया और बाजी अपनी जाति एवं राज्य की रक्षा के लिये संग्राम-भूमि में शहीद हो गया। बस फिर क्या था उस के साथियों में घबराहट उत्पन्न हो गई और उन्होंने भी ऊपर के क़िले की ओर मुख किया। दिलेरखाँ की सेना ने फिर नीचे के किले पर आक्रमण किया परन्तु मराठा सेना अपने शिरोमणि के मरजाने परभी हताश नहीं हुई थी उन्होंने पक्का इरादा कर लिया था कि जब तक शिवाजी की आज्ञा न आयगी तब तक किले से न निकलेंगे और ऊपरके किले से ही जगत् विध्वंसक आग बरसाने लगे यहां तक कि दिलेरखाँ को सेना सहन न करसकी और किले को छोड़ पीछे हट गई। उत्साह से भरपूर दिलेरखाँ ने समझा कि दिलेरी से कुछ काम न निकला किलेदार भी मारा गया परन्तु किला हाथ

ने आया। यह लोग मराठा हैं या भूत हैं। किले की उत्तर की ओर से हताश होकर दक्षिण की ओर बढ़ा। पूर्णधर के किले के बाहर परन्तु पास ही दक्षिण की ओर एक पहाड़ी पर वहीरगढ़ नामी एक छोटी सी गढ़ी थी वहां से किले को बहुत हानि पहुंचाई जा सकती थी। उस गढ़ी पर दिलेरखाँ ने अधिकार जा जमाया और गोला बरसाने की आज्ञा दी। इस अवसर में ईश्वरीय सहायता भी किले की रक्षा के लिये आ पहुंची अर्थात् वर्षा आरम्भ हो गई और दिलेरखाँ की गोलाबारी अपना काम न कर सकी, कई सप्ताह निकल गये परन्तु क़िले की दीवारों को कुछ भी हानि न पहुंची। बाहरसे कुछ भी सहायता न मिलने के कारण उनकी सेना का उत्साह न्यून होता जाता था इतने में उनको समाचार मिला कि स्वयं शिवाजी ने सुलह की शर्तें ठहरा लीं अर्थात् जो क़िला दिलेरखाँ की दिलेरी से भी हाथ न आया था, जिसकी रक्षा में सहस्त्रों मराठों ने प्राण दे दिये, जिसकी रक्षा में प्रसिद्ध शूरवीर बाजी मारा गया था उसी किले को शिवाजी ने स्वप्न मात्र के विश्वास से घबड़ा कर और एक मिथ्या विश्वास से निर्बल हो कर शत्रु के हवाले कर दिया। यह सच है कि इसी प्रकार के मिथ्या-विश्वासों का यह फल था कि वीर से वीर और जान पर खेलने वाली एवं आत्मा को नित्य मानने वाली भारत सन्तान इस्लामी झगडे का मुकाबला न कर सकी और थोड़े ही काल में दासत्व का कण्ठा पहिन अपने गौरव, विद्या एवं मान सत्कार को जवाब दे बैठी। इन्हीं मिथ्या-विश्वासों ने आर्य्यावर्त्त को पहिले भी कई बार धोका दिया, इसी मिथ्या-विश्वास ने इस समय भी शिवाजी की बुद्धि पर पत्थर डाल कर उसके उत्साह का हनन कर दिया और उस को ऐसी चेष्टाओं पर विवश किया कि उस के गौरव एवं

पुरुषार्थ शील जीवन पर एक अयोग्य कलङ्क लगा दिया। हम ऊपर लिख चुके हैं कि शिवाजीने राजा जयसिंह से सुलह की तदबीरें आरम्भ कर रखी थीं। राजा जयसिंह ने शिवाजी को लिख भेजा था कि यदि शिवाजीको राजपूतके बेटेकी बात पर विश्वास है तो निर्भय हो कर चला आये मैं उसको न केवल क्षमा ही करा दूंगा बल्कि दरबारे शाही से उस का सत्कार कराना मेरा धर्म होगा। तथाच उस की इस प्रतिज्ञा पर विश्वास कर के शिवाजी राजा जयसिंह की सेना में चला गया और पहुंच कर अपने आने की राजा जयसिंह को सूचना दी। राजा स्वयम् अपने खेमेसे बाहर आया और बड़े आनन्दसे मिला। उसे अपने खेमेमें लेगया और दाहिनी ओर बैठाया बहुत आदर सत्कार से पेश आया और उत्साह व धैर्य की बात करने लगा। उससे अगले दिन शिवाजी दिलेरखाँ से मिलने चलागया और स्वयं अपने हाथसे पूर्णधरकी तालियाँ उस के हवाले करदीं। शिवाजी की राजा जयसिंह से सुलह करने में निम्न लिखित शर्तें थीं।

प्रथम यह कि जो भूमि मुगलिया राज्य से छीनी थी उसे नितान्त छोड़ दे, दूसरी यह कि शिवाजी उन बत्तीस किलों में से जो कि उस ने बनाये अथवा राज्य से छीने थे २० किले मुगलिया राज्य के हवाले करे शेष बारह किले तत्सम्बन्धी प्रान्तों सहित तथा अन्य भी विजित भूमि जागीर के तौर पर शिवाजी के पास रहे। तीसरी यह कि शिवाजी के आठ वर्ष के बेटे सम्भाजी को ५ सहस्र का पुरस्कार मिले।

चौथी यह कि शिवाजी को बीजापुर के राज्य पर कुछ जागीर का (जिनका अनुमान ५००००० पगोड़ा वार्षिक था) अधिकार प्राप्त हो। इन अधिकारों के बदले २ लाख वार्षिक

की किस्त से ४० लाख पगोड़ा की भेंट राजकीय कोष में देने की प्रतिज्ञा की गई।

राजा जयसिंह इस प्रतिज्ञा पूर्ति का जामिन हुआ औरङ्गजेब ने इसके उत्तर में जो चिट्ठी लिखी थी उसमें इन शर्तों को स्वीकार कर लिया। उस ने देश मुखी चौथी प्रतिज्ञा में लिखे अधिकारों का कुछ भी जिक्र न किया। परन्तु उस ने शिवाजी से उन किस्तों में से पहली किस्त मांग ली थी जिस से प्रतीत होता है कि उस ने इस शर्त को भी स्वीकार कर लिया था। इसके सिवाय उसने एक शर्त और भी बढ़ा दी थी कि शिवाजी बीजापुर के सर करने में सहायता दे। तथाच इस प्रतिज्ञा की पूर्ति में शिवाजी दो हज़ार सवार तथा आठ हज़ार पैदल सेना के साथ राजा जयसिंह के साथ बीजापुर को अधीन करने में सम्मिलित हुआ। शिवाजी और नेताजी पालकर ने इन लड़ाइयों में ऐसे हाथ दिखाये कि औरङ्गजेब ने स्वयं अपनी लेखनी से शिवाजी को एक चिट्ठी लिखी जिसमें उसकी वीरता की प्रशंसा की और उसको एक प्रशंसनीय दोशाला भेजा। इसके पश्चात् बहुत शीघ्र उसने शिवाजी को लिखा कि मेरी यही इच्छा है कि दरबार में बुलाकर तुम्हारा आदर सत्कार किया जाय और फिर तुम को सत्कार पूर्वक दक्षिण लौट जाने की आज्ञा दी जाय। राजा जयसिंह ने शिवाजी को विश्वास दिया कि वह उसकी कुशलता का जिम्मेवार है इस विश्वास पर शिवाजी ने दरबार में जाने का इरादा किया और रघुनाथ को सूचना देने के लिये दरबार में भेजा इस अवसरपर उसने अपने प्रत्येक किले को देखा और आवश्यक आज्ञायें दुर्गाध्यक्षों तथा अन्य अफसरों को भेज कर प्रस्थित हुआ।

दिल्ली दरबार और शिवाजी।

राजा जयसिंह ने शिवाजी से बड़े आदर सत्कार की प्रतिज्ञायें की थीं शिवाजी इस विचार से दिल्ली दरबार की ओर प्रस्थित हुआ कि औरङ्गजेब से दक्षिणी राज्य का पट्टा प्राप्त करूँ, परन्तु जब देहली के समीप पहुंचा तो माथा ठनका वहां और ही और खेल दृष्टिगोचर हुए। समारोहित व सुसज्जित अगवानी के स्थानमें क्या देखता है कि केवल जयसिंह का बेटा रामसिंह तथा एक और साधारण सा शाही पदाधिकारी चला आता है। मन में बहुत लज्जित हुआ और सोचने लगा कि भूल गया और बड़ा भारी मात खाया। सन्देह हो गया कि कदाचित् प्रिय प्राण भी इसी भूल की भेंट हों परन्तु फिर भी सचेत होगया और बिना किसी शिकायत के देहली में प्रविष्ट हुआ औरङ्गजेब ने सोचा कि बस अब क्या है शिवाजी काबू में आगया यही अवसर है कि देहली का राजकीय गौरव इसको दिखाया जाय। उसने सोचा कि इस मनुष्य ने सारी अवस्था जङ्गलों में काटी है। लड़ाई भिड़ाई और लूट खसूट के बिना इसने कुछ नहीं देखा। आज तक मुग़लिया राज्य का गौरव इसके विचार में भी नही आया था। अपनी वीरता और चालाकी के भरोसे पर ही शाही सेना का मुक़ाबला करता रहा है। इसने कभी भी अनुभव नहीं किया कि जिन राजकीय सेनाओं का मुकाबला मैं बड़े साहस से करता हूँ उनकी पीठ पर एक ऐसा उच्च और महान् राज्य है कि जिसके सामने भारत के सम्पूर्ण राजे शिर झुकाते हैं।

अभिमानी राठौर चौहान तथा कछुवाहे भी बारी बारी से सब शिर झुका चुके। राणा प्रतापसिंह के उत्तर पदाधिकारी भी इस राज्य का सिक्का मान चुके हैं। कन्नौज-दिल्ली-

पाटलीपुत्र-मारवाड़ तथा मेवाड़ आदि सम्पूर्ण बड़े२ राज्यों का गौरव आदर तथा सत्कार और धन मुगलिया राज्य के चरणों में प्रविष्ट होचुका है। औरङ्गजेब चाहता था कि यह सब कुछ अपनी आँखों से देखे और मुगलिया राज्य के गौरव तथा अपनी हीन अवस्था का खूब अनुभव करे ताकि फिर मुकाबला करने का साहस न रहे।

औरङ्गजेब ऊपर से तो बहुत कुछ साधुपने का दावा रखता था यहां तक कि बाप को गद्दी से उतारकर कैद करना और अन्त में उसको विष दिलवाकर मरवा देना, भाइयों को एक एक करके वंचना तथा प्रतारणा से मार देना, हिन्दुओं के साथ सख्ती करना इत्यादि सब कुछ धर्मकी आड़ में किया करता था। माला दिन भर उसके हाथ में रहती थी। नमाज व रोजे का बहुत पाबन्द था। धर्म की आज्ञाओं का बहुत पाबन्द था। गाने को हराम समझता था। यहां तक कि उस के सामने गाना बजाना नितान्त बन्द था। वेष बहुत साधारण रखता था। शाहजहां की बनाई हुई गद्दी पर बैठना उचित न समझता था। परन्तु यह अवसर एक विशेष अवसर था इस अवसर की विशेषता इस ही से प्रकट है कि औरङ्गजेब ने भी उस धार्मिक साधुपनका थोड़ी देरके लिये तिलाञ्जलि देदी।

२८ ज़ीक़अद सन् १०७६ हिजरी तदनुसार १६६६ में एक बड़ा भारी दरबार रचा गया। सम्राट् महाशय स्वय बड़े बड़े अमूल्य मोती तथा अप्राप्त मणियों से खचित आभूषण धारण करके शाहजहां की गद्दी पर विराजमान हुए। मानो औरङ्गजेब इस तिथि को प्रथम ही अपने पिता की गद्दी पर बैठा। शेष सम्पूर्ण शत्रुओं को तो अधीन कर ही चुका था। एक शिवाजी की ओर से खटका था सो वह भी उस दिन उसकी

सेवा के लिए उपस्थित था। दरबारियों के लिये तीन दरजे सुसज्जित किये गये थे जिनमें से पहले दरजे में सुनहरी फ़र्श, दूसरे में रूपहरी फ़र्श तथा तीसरे में मर्मर का फर्श था जब शिवाजी दरबार में उपस्थित हुआ तो उसको सुनहरी फ़र्श, के दर्जे में उन लोगों की श्रेणी में जो कि पाँच सहस्री पुरस्कार रखते थे बैठने की आज्ञा मिली। इस अनादर और मानहानि को देख शिवाजी सहन न कर सका और राजपूती रक्त उसकी रगों में जोश मारने लगा। क्रोध के मारे नेत्र लाल होगये और बादशाह की ओर मुख करके प्रतिज्ञा-हानि का दोष लगाने लगा। अपने से उच्च दर्बारियों को सम्बोधन करके कहने लगा कि यदि उनमें मुझसे अधिक योग्यता है तो रण में आयें अपनी शक्ति दिखायें और मेरी शक्ति देखें। बादशाह की आड़ में डरपोकों और स्त्रियों के समान आभूषण पहनकर मुझसे उच्चदर्जे में बैठना अत्यन्त लज्जा की बात है।

सम्पूर्ण दर्बार चकित था कि यह मराठा क्या अनर्थ कर रहा है। सम्पूर्ण भारत का राजा सामने बैठा है चारों ओर मुसलमान पदाधिकारी अपने अपने स्थान पर हैं। सेना के लाखों मनुष्य किंचित् मात्र प्रेरणा से अपनी चमकीली और तीक्ष्ण तलवारों को घुमाने के लिए उद्यत हैं और यह महात्मा अकेला ही बिना किसी प्रकार के मित्र और सहायता के केवल चन्द साथियों के साथ ही इस प्रकार अण्डबण्ड बक रहा है।

परन्तु मुग़लिया दरबार में इस प्रकार के साहस का यह पहला ही अवसर न था किन्तु अभी बहुत काल व्यतीत नहीं हुआ होगा स्यात् उस घटना को अपने नेत्रों से देखने वाले दर्बारी भी विद्यमान् थे जब कि 'अमरसिंह राठौर' ने शाहजहां के सामने भरे दरबार में 'सिलाबत जङ्ग' का सिर उड़ा दिया था और बादशाह को स्वयं भागकर जनानखाने में प्राण बचाने

पडे थे। अन्त को वंश परम्परा से तो शिवाजी की नाड़ियों में भी राजपूती रक्त था और वह भी अत्यन्त शुद्ध, उज्ज्वल और पवित्र। कहते हैं कि औरङ्गजेब इस बात को बिलकुल पी गया और सिवा मुसकराने के उस समय और कुछ न कहा इसके पश्चात् शिवाजी की उपस्थिति बन्द हो गई या स्वयं शिवाजी सलाम करने को नहीं गया। हाँ दूतों की मार्फ़त मेल मिलाप की कुछ२ बातें होती रहीं। औरङ्गजेब को अपनी चालोंपर बहुत विश्वास था और जिससमय शिवाजी अत्यन्त क्षुब्ध होकर कड़े शब्द मुख से निकालता था तो औरङ्गजेब केवल यह विचार कर हँसदेता था कि शेर की कन्दरा में भी आकर गुर्राता है? क्या यह मालूम नहीं कि "जीवन की घड़ियाँ समाप्त हो चुकी हैं और अब वीरता दिखलाने के अधिक अवसर हाथ न आयेंगे।" शिवाजी जीवन से तो हाथ धो ही चुका था अब तो केवल भाग्य परीक्षा ही कर रहा था कि शायद किसी प्रकार इस जाल में से निकल जाय।

अन्त को औरङ्गजेब ने आज्ञा दे दी कि इसके निवास स्थान पर पहरा रक्खा जाय। जहां भी यह शहर में जाय पहरेदार इसके साथ रहे मानो शिवाजी को नज़र बन्द कर लिया गया।

एक अँग्रेज इतिहास वेत्ता लिखता है कि औरङ्गजेब ने शिवाजी को कत्ल करडालने का तो प्रबन्ध किया। परन्तु कुँवर 'रामसिंह' राजा जयसिंह के बेटे को ख़बर होगई। उसने शिवाजी को विदित कर दिया शिवाजी ने बीमारी का बहाना किया और इलाज आरम्भ हुआ। थोड़े दिनों के पश्चात् प्रसिद्ध कर दिया गया कि अब आराम होगया और स्वास्थ्य स्नानके अवसर पर अमीरोंके घर मिठाइयोंकी बड़ी२ टोकरियाँ भेजनी

आरम्भ होगईं। यही टोकरियां जो मनुष्य के छिपाने के लिये पर्याप्त थीं भर २ कर दान के लिये मन्दिरों व मसजिदों में भेजनी आरम्भ कीं।

एक दिन(सफरकी अन्तिम तिथि को) अपने एक साथी को जो कि आकृति व ढाँचे में बहुत कुछ मिलता था अपनी सोनेकी अँगूठी पहराकर लिटा दिया और स्वयम् एक टोकरी में बैठ और अपने बेटे सम्भाजी को जो कि साथ आया था दूसरी टोकरी में बिठा शहर से बाहर निकल गया। देहली से बाहर पहिले से ही सवारी का प्रबन्ध विद्यमान था घोड़ों पर सवार हो कर अगले दिन मथुरा पहुंचा यहाँ पर इस का एक विश्वासपात्र मित्र नेताजी और चन्द एक ब्राह्मण उस के प्रतीक्षक थे वहां उस ने दाढ़ी मूँछ मुँडवा कर विभूति रमा एक साधु का वेष बदला। रुपया पैसा और कुछ हीरे मोती आदि खोखली छड़ियों में रख रातों रात प्रयाग पहुंचा। प्रयाग में उस ने अपने बेटे सम्भाजी को जो कि उस समय बालक था एक दक्षिणी ब्राह्मणके सुपुर्द किया और उसको सख्त हिदायत की कि जबतक मेरे हाथ की लिखी चिट्ठी न आये तू इसको मत भेजना इस प्रकार से अपना बोझ हलका करके इसी वेष में काशी की ओर एक साधुओंके अखाड़े के साथ प्रस्थित हुआ। वैरागियों गुसाइयों और उदासियोंका यह झुण्ड प्रतिदिन कूंच करता जाता था कि एक स्थान पर एक मुसलमान सेनाध्यक्ष ने उन्हें पकड़ लिया और तलाशी की आज्ञा हुई एक दिन तथा एक रात इसी प्रकार कैद में कटा। शिवाजी को चिन्ता हुई कि ईश्वर न करे कि यह सम्पूर्ण परिश्रम अकारथ जाय और देहली के स्थान काशी तथा प्रयागके मध्य में ही ? कङ्गाल मुसलमानके हाथसे जान जाय। सोचा कि ऐसा काम कीजिये

कि इधर या उधर पहरेदारों से कह कहा कर व लोभ आदि देकर यदि कुछ बचाव हो सके तो करूँ यह विचार कर तुरत फौजदार के सामने आखड़ा हुआ और उसको चुपके से कहा कि मैं शिवाजी हूं। एक ओर मैं हूँ और इस ओर बहुमूल्य दो हीरे हैं। यदि हीरे लेना चाहता है तो मुझ को छोड़ दे अन्यथा मैं उपस्थित हूँ जो चाहे सो कर चाहे जीता पकड़ले चाहे शिर काटकर औरङ्गजेब के पास भेज दे परन्तु इस अवस्था में हीरे हाथ न आयँगे। शिवाजी ने सोचा था कि यदि यहाँ एकरात और भी रहा तो प्रातःकाल तक शाही कर्मचारी पहुंच जायँगे और फिर जीवन से हाथ धोने पड़ेंगे और यदि यह चाल चल गई तो अच्छा अन्यथा मरना तो है ही।

शिवाजी ने अपनी जान हथेली पर धरकर जो चाल चली थी चल गई। मुसलमान फौजदार ने लालच में आकर हीरे ले लिये और शिवाजी को छोड़ दिया। बस फिर क्या था अत्यन्त फुरती से दिन रात कूँच करता हुआ काशी जा पहुँचा वहाँ से बिहार पटना और चाँदा के रास्ते दक्षिण में जा पहुंचा।

उधर देहली का वृत्तान्त सुनिये। एक सूचक ने सम्राट् को खबर दी कि शिवाजी भाग गया सम्राट् ने कोतवाल से उत्तर मांगा कोतवाल ने उत्तर में लिखा कि उसके चारों ओर पहरेदार विद्यमान हैं और शिवाजी भी विद्यमान् है। सम्राट् को शान्ति हो गई परन्तु फिर दूसरे सूचक ने ख़बर दी कि शिवाजी भाग गया सम्राट् ने फिर कोतवाल से उत्तर मांगा कोतवाल स्वयं शिवाजी के निवास स्थान में आया और शिवाजी के पलङ्ग पर एक मनुष्य को पड़ा पाया जो शिवाजी

को अँगूठी पहिने हुए था। उसने फिर भी सम्राट् को वही उत्तर दिया। परन्तु तीसरे सूचक ने सम्राट् को फिर सूचना दी कि कोतवाल की रिपोर्ट झूँठी है। इस तीसरी खबर पर जब अत्यन्त सावधानी से पड़ताल की गई तो भेद खुल गया। तत्काल सम्पूर्ण सूबों, हाकिमों, सेनादारों तथा फ़ौजदारों के नाम परवाने जारी होगये कि शिवाजी जहां भी मिले पकड़कर दरबार में उपस्थित किया जाय। अत्यन्त शीघ्रता से दूत चारों ओर प्रस्थित किये गये परन्तु पिंजरे से निकला हुआ शेर फिर हाथ न आया और औरङ्गजेब हाथ मलता रहगया।

शिवाजी तो इस प्रकार जालसे निकल गया परन्तु बेचारे रामसिंह पर शाही विपत्ति पड़गई रामसिंह को अपनी प्रतिज्ञा पूर्तिका दण्ड भुगतना पड़ा। उधर उसका पिता बीजापुर की लड़ाई से लौटता हुआ मर गया। यदि शिवाजी भी औरङ्गजेब के हाथ से न निकलता तो आवश्यक था कि औरङ्गजेब के हाथ से मारा जाता और औरङ्गजेब की चाल सम्पूर्ण प्रकार से सफल होती। परन्तु तकदीर के दफ्तर में कुछ और ही लिखा था। जयसिंह औरङ्गजेब की सेवा करता हुआ मर गया जिसकी मृत्यु से औरङ्गजेब को अपने विचारानुसार एक बलवान् शत्रु से छुटकारा मिला। परन्तु शिवाजी ने औरङ्गजेब के हाथ से मुक्त होकर ऐसे महान् राज्य की नींव डाली जिसने कि मुग़लिया राज्य को भारतवर्ष से उखाड़ डाला।

जब शिवाजी देहली दर्बार को प्रस्थित हुआ था तो जय-सिंह बीजापुर से मुक़ाबला कर रहा था और शिवाजी का एक वीर अफ़सर तन्ना जी मालकर इसके साथ था और बड़ी वीरता से अपने स्वामी की ओर से लड़ रहा था शिवाजी के

देहली से भाग आने पर औरङ्गजेब ने नत्थाजी' को (जिनको मुसलमान इतिहासवेत्ता नत्थू जी भी कहते हैं। पकड़ने की आज्ञा दी। नत्थाजी कैद होकर देहली लाया गया। उसको मुसलमान होने के लिये लाचार किया गया। परन्तु ज़बरदस्ती मुसलमान किया गया "कुलीखाँ" अवसर पाकर भाग गया और फिर शिवाजी से जा मिला।

शिवाजी का अभ्युदय।

दक्षिण में पहुंचकर शिवाजीने फिर उन प्रान्तों को लौटाने के उपाय किये जो उसने मेलमिलाप के समय राजा जयसिंह को दे दिये थे। बहुत से किले तो सुगमता से हाथ आ गये और कई एक के लिये युद्ध भी करने पड़े। परन्तु थोड़े ही समय में सतारा, परनाला और राजगढ़ जैसे प्रसिद्ध किले उसने लौटा लिये। लगभग वह सम्पूर्ण मण्डल जो उसने राजा जयसिंह के हवाले किया था पुनः उसकी अधीनता में आ गया। यहां तक कि उसने फिर एक बार सूरत को जो कि मुगलिया इलाक़ा था लूटा और बहुत सा माल व धन वहां से प्राप्त किया। जब सूरत की खबर औरङ्गजेब को पहुंची तो वह अत्यन्त क्रोध में आया और फिर उसने दिलेरखाँ व शुजायतखाँ को शिवाजी को दण्ड देने के लिये फौजकशी की आज्ञा दी। याद रखना चाहिए कि औरङ्गजेब को कभी किसी पर विश्वास न आया था 'अकबर' ने तो हिन्दू राजाओं को चापलोसी, विश्वास एवं एहिसानों से अपना सेवक बना लिया था और उनकी ही सहायता से सारे भारत पर विजय प्राप्त करके मुगलिया राज्य को दृढ़ता दी थी।

जहाँगीर व शाहजहाँ ने भी न्यूनाधिक अकबर ही का अनुसरण करके हिन्दुओं से अच्छे सम्बन्ध स्थिर रक्खे।

यद्यपि शाहजहां के समय में ही इन सम्बन्धों का मुख बदल गया था। परन्तु औरंगजेब के समय में तो उन का ढांचा ही उलट गया। औरङ्गजेब हिन्दू राजाओं को अत्यन्त घृणा तथा अविश्वास की दृष्टि से देखता था। परन्तु साथ ही इस बात का भी यत्न करता था कि वे खुले मुख इस के शत्रु न बन जायँ। औरङ्गजेब हिन्दू राजाओं को प्रायः ऐसे ही स्थानों पर भेजा करता था जहाँ से उन के जीते जी आने की आशा न हो। इस के बिना इस अविश्वास का एक और भी कारण था कि जिस प्रकार स्वयम् औरङ्गजेब ने छल, कपट और पूर्ण धूर्तता से गद्दी प्राप्त की थी उसी प्रकार उस को अपने बेटों से बेईमानी का प्रत्येक समय सन्देह रहता था। पिता को कैद करके और भाइयों को काट कर उस ने अपने मार्ग को पैतृक शत्रुओं से निष्कण्टक कर लिया था। उस को सन्देह था कि उसी के दृष्टान्त को लेकर उस ही के अपने लखतेजिगर (बेटे) भी अपने पिता के साथ वही बर्ताव न करें जो कि उस ने अपने पिता के साथ किया था। उस का बड़ा बेटा जो भारत के इतिहास [illegible] शाहआलम के नाम से प्रसिद्ध है एक हिन्दू माता के गर्भ [illegible] औरङ्गजेब को यह डबल चिन्ता थी कि ईश्वर न [illegible] राजपूत 'शाहआलम' के साथ मिल जावें और जो [illegible] ने बिना राजपूती सहायता के किया था उस को 'शा[illegible]' अपने राजपूत बन्धुओं की सहायता से कर डालें।

एकबार [illegible] बीमार होगया तो उसके रणवास में [illegible] स्त्रियों [illegible] दो दल हो गये थे। औरंगजेब की बहिन रोशनआरा यह गठने गांठने लगी कि हिन्दू रानी के बड़े शाहआलम को गद्दी न मिले और मुसलमान बेगम के शाह

जादे को राज सिंहासन का अधिकारी व स्वामी मानाजाय। यह षड़यन्त्री केवल रणवास तक ही नहीं रही किन्तु अमीरों दरबारियों तथा मन्त्रियों तक फैलगई तथा राजा जयसिंह भी उन मनुष्यों में से था जो कि शाह मुअज्जम के पक्षपाती माने जाते थे, औरंगजेब ने इसी विचार से जयसिंह को दक्षिण की ओर भेजा था कि उस ने शिवाजी को मार डाला तो अच्छा यदि वह स्वयं मर गया तो और भी उत्तम होगा। जब जयसिंह को दक्षिण की ओर भेजा गया तो उस के बड़े लड़के रामसिंह को बतौर ज़मानत के दरबार में रख लिया गया, जिस का कि अभिप्राय यह था कि यदि पिता पर कुछ सन्देह हुआ तो बेटे को मार डाला जायगा और जयसिंह भी इसी भय से सीधा बना रहेगा। ऊपर वर्णन कर चुके हैं कि जब शिवाजी देहली से भागा तो रामसिंह पर सन्देह किया गया और उसकी मानहानि भी की गई। राजा जयसिंह दक्षिण की मुहिम से लौट कर न आ सका अर्थात् मार्ग में ही मरगया। अब एक और राजपूत अमीर की बारी आई कि औरंगजेब के हत्थे चढ़े तथा उस के मनसूबे को पूरा करने का कारण बने। राजा जयसिंह की मृत्यु पर शाहजादा आलम को दक्षिण का सूबेदार नियत किया गया और राजा जसवन्तसिंह जोधपुराधीश को शाहजादे की सहायता के लिये नियत किया गया। दिलेरखाँ और खान-जहाँ को खास तौर पर शाहजादे के आधीन राजा शिवाजी के प्रतीकार के लिये नियत किया गया।

कई एक इतिहासवेत्ताओं का मत है (औरंगजेब जैसे कपटी मनुष्य से आश्चर्य भी नहीं) कि शाहजादा मुअज्जम को अपने पिता से यह हिदायत हुई थी कि वह दक्षिण में दिखावे मात्र के लिये सम्राट् के विरुद्ध विद्रोह फैलावे

शिवाजी तथा अन्य हिन्दू राजाओं को अपने साथ मिला कर औरङ्गजेब के हवाले करदे। तथाच शाहजादा मुअज्जम ने ऐसा ही किया दक्षिण में पहुँच कर शिवाजी से अत्यन्त प्रेम-भाव से पेश आया और उस को बहुत लालच दिया। और-ङ्गजेब की ओर से शिवाजी को राजा की पदवी भी दी। सम्भाजी का पुरस्कार भी स्थिर कर दिया गया और इस के सिवा बरार में शिवाजी को जागीर भी दी गई यहां तक कि पूना, चाकन तथा सूपा की प्रान्तें भी लौटा दी गईं। शिवाजी ने शाहजादा मुअज्जम से परोक्षतया पत्रव्यवहार में सहायता के लिये प्रतिज्ञा की परन्तु खुले तौर पर उस के पास आने से इनकार कर दिया।

वह एक बार मुगलिया प्रतिज्ञाओं के धोके में अपने प्राण जोखम में डाल चुका था। अब सम्भव नहीं थाकि उस जैसा विचारशील मनुष्य फिर अपने आपको इस आपत्ति में डाल लेता। परन्तु शाह मुअज्जमकी सेना व अमीर अफसर जिनमें बहुत से हिन्दू भी शामिल थे इस बनावट में आगये कि जिस का फल यह हुआ कि बहुत से छल एवं कपटों के साथ औरङ्गजेब के हवाले करदिये गये। बहुत से तो औरङ्गजेब की घटनाओं के शिकार हुये और जो बचे थे उन्हें इस तरह औरङ्गजेब जैसे बलवान सम्राट् ने खुले तौर पर मार डाला।

—*—

बीजापुर और गोलकुण्डेके मुसलमानभी शिवाजी को कर देना स्वीकार करते हैं।

हम ऊपर लिख चुके हैं कि शाहजी दरबार बीजापुर का नौकर था। जब शिवाजी ने अपने जीवन के वास्तविक काम आरम्भ किये और हाथ में तलवार लेकर अपने भुजदण्ड

के साहाय्य एवं बुद्धि के भरोसे पर इस बात का बीड़ा उठाया कि अपनी जाति एवं देश को यवनों के पंजे से मुक्त कर के मराठा राज्य की नींव डालेगा। पिछले पृष्ठों में लिखे सम्पूर्ण-वृत्तान्तों से जो शिवाजी से ४० वर्ष की अवस्था तक प्रकट हुये। यह किस को ज्ञान था कि 'शाहजी' का बेटा शिवाजी इस प्रकार के साहस ऐसी वीरता एवं पुरुषार्थ का सबूत देगा जैसा कि हम पीछे दिखा चुके हैं। किन्तु १९ वर्ष के शिवाजी को देखकर किसी मनुष्य के हृदय में यदि कोई विचार आया भी होगा तो केवल इतना कि यह अपने पिता से अधिक बलवान् तथा मान्य होगा, और शायद किसी का तो यह भी विचार हो कि इस प्रकार उजड्डपने की बातें राज-विद्रोह, लूट-खसोट की आदतें उसके विध्वस का कारण होंगी, यह बात तो शायद किसी की बुद्धि में भी न समाई हो कि २५ वर्ष की अवस्था से पूर्व पूर्व हो १९वर्ष का लड़का एक अच्छे राज्य का स्वामी होगा, देहली का मुगलिया सम्राट् उसके साथ सुलह की प्रतिज्ञायें करेगा और बीजापुर तथा गोलकुण्डा के वंश उसको कर देना स्वीकार करेंगे। भाव यह कि इसप्रकार थोड़े ही समयमें शिवाजीने जो कुछ करके दिखाया वह सब लोगों की आशाओं से बढ़ कर था। शिवाजी ने कई बार सफलता भी प्राप्त की और निष्फलता भी प्राप्त की परन्तु पुरुषार्थ एवं साहस का ऐसा धनी था और तदबीरों का ऐसा पूरा था कि निष्फलता भी उस के लिये लाभदायक ही सिद्ध होती रही। सच है परमात्मा का हाथ उसके सिर पर था। उसका भाग्य उत्तम था तथा उस के सितारे की बुलन्दी उस की जाति का गौरव, उसके देश की भाग्यशीलता का निशान था। मैत्री से लोगों को आधीन कर लेता था, वाणी से लोगों के हृदयों को

आकर्षण करता था, प्रेम स्नेह से दूसरों को अपना प्रेमी बना लेता था। मनुष्यों की परीक्षा करता था और गुणकी पहिचान रखता था शत्रुओं को दोस्त और विश्वासपात्र दोस्त किन्तु विश्वासपात्र नौकर बना लेना उसीका काम था। बहुत से योग्य वीर और साहसी मनुष्य उसके साथ लड़े और उनमें बहुत से उसकी उच्च बुद्धिमत्ता के क़ायल होकर उसपर प्राण देने वाले उसके सिपाही तथा अफ़सर बने। मनुष्यों को पहचान कर उनसे काम लेना यह एक ख़ास गुण था जो शिवाजी की सफलता का कारण था जिसने कि उसको इस थोड़े से समय में बड़े २ वीर और बलिष्ठ शत्रुओं के मुक़ाबले में सफलता प्राप्त करादी। सन् १६६७ व ६८ ई० में सुलतान-मुअज़्ज़म सूबेदार दक्षिण व शिवाजी के मध्य में एका रहा। सन् १६६८ के मध्य में अलीआदिलशाह बीजापुर के राजा ने देहली-सम्राट् से सुलह कर ली और साथ ही शिवाजी से सुलह करके उसको तीन लाख रुपया वार्षिक देना स्वीकार किया इस प्रकार आदिलशाह ने भी ५ लाख रुपया वार्षिक स्वीकार करके सुलह करली। सन् १६६७ तक शिवाजी अपने राज्य के प्रबन्ध में लगा रहा और लगभग दो वर्ष तक कोई लड़ाई भिड़ाई नहीं हुई।

मुग़लिया राज्य से भी मुक़ाबला सिंहगढ़ की लड़ाई और तन्नाजी की बलि।

सन् १६७० में औरङ्गज़ेब ने दक्षिण के सूबेदार को फिर आज्ञा दी कि वह शिवाजी और उसके उच्च पदाधिकारियों को गिरफ्तार करे। जब शिवाजी को इसका समाचार मिला तो उसने भी अपनी ओर न केवल अपनी रक्षा के लिये किन्तु संग्राम की भी तय्यारियां आरम्भ कर दीं। पूर्व इसके कि

उसका शत्रु उसपर चढ़ाई करता उसने अपने अफ़सरों को सिंहगढ़ एवं पूर्णधर दोनों किले लौटा लेने की आज्ञा दी। औरङ्गजेब ने अपने स्वाभाविक कपट से ही इन दोनों किलों में राजपूत सेना रक्खी हुई थी और एक उदयभानु नामी प्रसिद्ध सिपाही इनका अफ़सर था।

शिवाजी ने अपने अफ़सरों से पूछा कि वह कौनसा सिंह है जो गये हुये सिंहगढ़ को इन शत्रु सिंहों से लौटायेगा। गीदड़ों से सिंहगढ़ का खाली करा लेना तो बड़ी भारी बात न थी परन्तु शूरवीर शेरों को निकाल कर खोये हुये सिंहगढ़ का प्राप्तकर लेना एक असाधारण साहस का काम था सिवाय तन्नाजी के किसी का साहस न हुआ कि इस बीड़े को उठाये उसने तलवार हाथ में उठाकर इस सेवा को पूरा करने के लिये आज्ञा मांगी परन्तु शर्त यह थी कि मेरा सगा भाई और एक हज़ार मालवा जिनको मैं स्वयं छांट लूँ मुझे दिये जायँ। याद रखना चाहिए कि यह क़िला बड़े दुर्गम स्थान पर था पहाड़ों की श्रेणी के पूर्वीय किनारे पर ऐसे स्थान पर यह क़िला बनाया गया था कि जहां पूर्व और पश्चिम की ओर तो ऊँची ऊँची चोटियाँ थीं, जहां पर कि मनुष्य का गमनागमन अत्यन्त ही कठिन था। यह क़िला एक ऐसे दृढ़ टीले पर था कि जिसकी सीधी चढ़ाई आध मील से कम न था। यह टीला पृथ्वी मण्डल पर मानों एक स्थाणु के समान खड़ा था आध मील की चढ़ाई के ऊपर चालीस फीट तक काले पत्थर का टीला है जिसके ऊपर एक दृढ़ पत्थर की त्रिकोण-दीवार है जिसमें कि स्थान २ पर बुर्ज भी हैं। इस बाहरी दीवार के अन्दर किला है जो बनावट में त्रिभुजाकार है, अन्दर से किले का मण्डल दो मील से अधिक है।

किले के ऊपर खड़े हुए अच्छी शुद्ध ऋतु में पूर्व की ओर मनीरा का सुन्दर तथा चित्ताकर्षक पहाड़ी दृश्य है। दक्षिण की ओर एक बड़ा भारी मैदान दिखाई देता है जिसके अगले भाग में शहर पूना की आबादी नज़र आती है। उत्तर एवं पश्चिम की ओर जहां तक दृष्टि जाती है पर्वत ही पर्वत दिखाई देते हैं यहां तक कि आकाश की नीलगूँ रंगत पहाड़ी बादलों की रंगत से मिलकर एक धुआँधार होजाती है और आबादी नज़र नहीं आती इसके पास ही पूर्णधर का किला ठीक उस स्थान पर है जहाँ से पहाड़ी सिलसिले का रुख दक्षिण की ओर हो जाता है। शिवाजी ने प्रत्येक अवस्था को दृष्टिगोचर करके इन दोनों किलों को बनाया था और जिस समय जय-सिंह से सुलह की थी उस समय दोनों किले उसके हवाले कर दिये थे। देहली से लौटकर यद्यपि शेष सबके सब प्रान्त वापिस ले चुका था परन्तु यह दोनों किले अभी मुसलमानों ही के आधीन थे और मुसलमानों की ओर से वहां राजपूत सेना नियत थी।

इस संग्राम में जो वीरता एवं साहस तन्नाजी तथा उसके साथी जांबाज़ सिपाहियों से देखने में आया उसे एक मराठा-कवि ने पद्य में वर्णन किया है। मराठे इस गीत को बड़े प्रेम व स्नेह से गाते हैं और महाराष्ट्र का बच्चा बच्चा इस जातीय विजय के इस अद्वितीय गीत से परिचित है। ऐतिहासिक लेखों तथा इस जातीय गीत में यद्यपि कहीं कहीं विरोध है परन्तु इस गीत में तैयारी एवं घेरे के हालात ऐसे विस्तार से लिखे हैं और वे सबके सब चित्ताकर्षक एवं उत्तम उत्तम शिक्षाओं से भरे हुए हैं हम उनमें से कुछ आवश्यक और बड़ी बातें यहां लिखते हैं।

इस किले के घेरे के विषय में यह गाथा चली आती है

कि जिसके विजय करने का विचार सबसे पहिले शिवाजी की माता जीजीबाई के दिल में पैदा हुआ था। शिवाजी राजगढ़ में था परन्तु जीजीबाई प्रतापगढ़ में रहा करती थीं। एक दिन महल के ऊपर खड़ी थीं कि दूर से सिंहगढ़ के बुर्ज दृष्टि पड़े। बस फिर क्या था दिल में जोश भर आया और सोचने लगी कि जब तक मेरे बेटे के पास यह किला न होगा तब तक राज्य अधूरा है। इस विचार को लेकर महल से नीचे उतर आईं और एक दूत को बुलाकर शिवाजी के पास पत्र भेजा कि शीघ्र आओ तुमको माताजी याद करती हैं।

शिवाजी इस आज्ञा का सुनकर तत्काल प्रतापगढ़ पहुंचा माताजी ने जो कि पुत्र की प्रतीक्षा में नेत्र गाड़े देख रही थी चौसर बिछादी ताकि शिवाजी जान जाय कि माताजी चौसर खेल रही हैं। शिवाजी आया और वन्दना की। माता उठी पहिले तो राज्योपाधि से आदर किया। पश्चात् मातृस्नेह से गोद में लेकर प्यार किया और अपने पास बिठाकर कहा कि आओ बेटा! एक बाजी चौसर की लगायें। शिवाजी ने पूछा कि मुझे इतनी शीघ्रता से क्यों बुलाया गया शीघ्र बताइये ताकि आज्ञा पालन में देर न हो। माता ने होशियारी से प्रश्न को टाल कर कहा कि आओ बेटा, पहिले एक चौसर की बाज़ी खेलें। बेटे ने आज्ञापालन को धर्म समझा और कहा कि अच्छा। आप पहिले पासा डालें माता ने कहा कि नहीं बेटा राजा की विद्यमानता में कोई अगवानी नहीं कर सकता क्योंकि यह राजपदवी का अधिकार है। सत्कार के लिये शिवाजी ने पासा डाला और वह अच्छा न पड़ा तब माताजी ने पासा डाला तो वह अच्छा निकला, शिवाजी ने कहा 'माताजी मैं हारा और आप जीतीं जो कुछ आज्ञा हो भेंट किया जाय किले माल व धन सब कुछ विद्यमान हैं जो चाहिए लीजिए।'

मानाजी-बेटा न तो तेरे किले को आवश्यकता है न माल और धन पर नेत्र जमते हैं न कुछ और ही चाहिए। केवल एक वर माँगती हूं प्रतिज्ञा करो कि पूर्ण करोगे ?

शिवाजी-माताजी आज्ञा दीजिए।

माताजी-बेटा कमर बांधो तलवार खींचो, यह सिंहगढ़ का किला मेरे नेत्रों में खटकना है उसको जीतो और माता के दिल को शांत करो। जबतक वह किला फ़तह न करोगे तब तक तुम्हारा राज्य अधूरा है और तुम्हारी शक्ति सन्देहमें है। माताजी की यह बात सुनकर शिवाजी पर वज्रपात हुआ कान्ति उड़गई उदासीनता छा गई और उसने कहा :—

माताजी बड़ा कठिन वर मांगा यह किसका साहस है कि शूरवीर उदयभानु का मुकाबला कर सके। माताजी ! जो कुछ मेरा है वह आप ले सकती हैं परन्तु जो वस्तु मेरी नहीं उसके विषय में मैं कैसे प्रतिज्ञा कर सकता हूं।

माताजी-(अत्यन्त क्षुब्ध होकर) "बेटा ! याद रक्खो माता का शाप बहुत बुरा होता है तेरा सम्पूर्ण राज्य मेरे शाप से भस्म हो जायगा मुझको वचन दे चुका है उसका पालन करना तेरा परमधर्म है, मुझे बिना सिंहगढ़ के और किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं।" माता की वक्तृता को सुनकर राजा तत्काल उठ खड़ा हुआ और आज्ञा दी माता जी के वास्ते पालकी लाओ दोनों बैठकर राजगढ़ को प्रस्थित हुए।

जीजीबाई ! तू धन्य है ! तेरा गर्व धन्य है!! तेरी जैसी माता हो तो शिवाजी जैसा पुत्र क्यों न हो ? तेरी जैसी छाती दूध पिलाने वाली हो तो शिवाजी जैसा शूरवीर हिन्दुओं के खोये हुए गौरव को दुबारा लाकर अपने मस्तक पर क्यों न राज्य-तिलक लगवाये, तेरी जैसी गोद हो तो शिवाजी क्यों न केहरी

जैसी शक्ल धारण करे, जीजीबाई तू धन्य है ! जिसके बेटे ने धर्म की रक्षा की, जाति की रक्षा की, तेरे एवं अपने लिये यश की धारा बहा दी ।

हिन्दू इतिहासवेत्ता लिखते हैं कि शिवाजी भवानी का पूजक था और श्रीमती भवानी देवी ने उसकी पूजा से प्रसन्न होकर उसको वरदान दिया था । सच पूछो तो शिवाजी को भवानी देवी जीजीबाई ही सचमुच जीती जागती देवी थी। बुद्धि की धनी थी और साहस में भी कम न थी, ऐसी देवी और ऐसा पुजारी धन्य है । देखो जिस चौसर ने महाभारत का युद्ध कराकर सम्पूर्ण वीरों का नाश करा दिया उसी चौसर ने इस अवसर में जीजीबाई की सहायता की ।

शिवाजी, उसकी माता दोनों किले में पहुंचे माता तो महल में चली गई और शिवाजी कचहरी में आया । दर्बार को आज्ञा दी और सम्पूर्ण अमीर सूबे शासक तथा मित्रादिकों को भी जो किले में विद्यमान थे माता की आज्ञा सुनाई । सुनकर सब दम पी गये किसी ने भी इस काम के लिए बीड़ा न उठाया । अन्त को राजा बोला कि कम से कम एक मनुष्य मेरे राज्य में अवश्य है जो कि इस काम को पूरा करेगा । दूतको बुलाया और आज्ञा दी कि जाओ और तन्नाजी को कहो-"राजा तुमको याद करता है, तन्नाजी चौथे दिन तक यहां पहुंच जाएँ ।"

यह वही तन्नाजी है जो अफ़ज़लखाँ की घटना के समय शिवाजी के साथ था । राजा की आज्ञा पाकर दूत अपने काम पर चल दिया जब तन्नाजी की जागीर में पहुंचा तो चारों ओर आनन्द और प्रसन्नता के सामान दिखाई दिये । पूछने से ज्ञात हुआ कि तन्नाजी के बेटे रायवा के यज्ञोपवीत तथा विवाह संस्कार के लिये तैयारियाँ हो रही हैं । दूत ने सम्पूर्ण

बन्धुओं एवं सेनाध्यक्षों के सामने तन्नाजी को राजा का आज्ञा-पत्र दिया। जब यह आज्ञा पत्र पढ़ा गया तो तन्नाजी का चाचा शेलरजी यूं बोला—

शेलरजी-"तन्नाजी ! सिंहगढ़ का विजय करना सुगम नहीं है जितने भी मनुष्य उस किले पर चढ़ कर गये, जीते नहीं आये और मुझे अच्छा नहीं प्रतीत होता कि तुम अपने पुत्र के विवाह को छोड़ कर इस युद्ध के लिये जाओ। मेरा मस्तक ठनकता है तुम जीतेजी नहीं आओगे"।

तन्नाजी-"चाचाजी ! आपने यह क्या कहा, क्या मैं क्षत्रिय नहीं हूं ? क्या मैंने क्षत्राणी का दूध नहीं पिया जो आप मुझे मौत से डराते हैं"।

तन्नाजी यह कह ही रहा था कि उस का इकलौता बेटा भी सामने से आ निकला उसने पुत्र को पास बुला और धैर्य देकर कहा कि मैं राजा की सेवा में जाता हूं और सात दिन का अवकाश लेकर तेरे विवाह केलिये लौट आऊं-गा, तत्पश्चात् घेरे (मुहासरह) पर जाऊंगा। तन्नाजी ने राजाज्ञा पालन करने के लिये अपने मण्डल की सम्पूर्ण लड़ने भिड़ने वाली जातियों को एकत्र करने की आज्ञा दी। १२ हज़ार युवा वीर एकत्रित करके राजगढ़ की ओर चला।

कवि कहता है कि ये १२ सहस्र के १२ सहस्र ग्रामीण तथा बनवासी मनुष्य थे जो कि अपने २ कम्बल कन्धों पर रख कर तथा अपने २ खेत छोड़ कर 'तन्नाजी' के चारों ओर जमा हो गये ! न तो उन के पास वस्त्र थे और न शस्त्र थे किन्तु उन की लाठियाँ ही उन के लिये शस्त्र थे।

जब ग्राम से बाहर निकले तो शकुन बहुत मन्द दिखाई दिये, वृद्ध शेलर को सन्देह हो गया। तन्नाजी से कहने लगा

कि शकुन उत्तम नहीं लौट जाओ। परन्तु वीर तन्नाजी बोला कि 'चाचा'! मैं शकुन वकुन नहीं जानता, मेरा राजा भाग्य का बड़ा धनी है उस के काम में कोई मन्द शकुन हो नहीं सकता। आप पीछे हटने का नाम न लो सीधे मार्ग पर पड़ जाओ।

वहां से कूच पर कूच करता हुआ तन्नाजी राजगढ़ के क़िले के सामने पहुंचा। दूर से जीजीबाई ने जो देखा तो विचार उत्पन्न हुआ कि शायद् कोई शत्रु चढ़ आया है और तत्काल शिवाजी को बुलाया और मुकाबले की आज्ञा दी और शिवाजी ने जो ध्यान से देखा तो माताजी को समझाया कि शत्रु नहीं किन्तु मित्र है। तन्नाजी अपनी सम्पूर्ण सेना को द्वार के बाहर ही छोड़ कर स्वयं ही किले में प्रविष्ट हुआ। और सीधा शिवाजी के पास आया। बन्दनादि कर के बोला कि हे राजन्! मैंने कौनसा अपराध किया है जो मुझे ऐसे समय में बुलाया गया जब कि मैं पुत्र के विवाह में संलग्न था। क्या कारण है जो मुझ पर इतनी सख्ती की गई। शिवाजी ने कहा तन्नाजी! मैंने तुम्हें नहीं बुलाया किन्तु माताजी ने याद किया है। उधर माताजी भी वहीं बैठी सुन रही थीं चकित हो गयीं कि शिवाजी ने यह बला मेरे सिर पर टाल दी, अस्तु देखें मुझे कैसे सफलता होती है। तत्काल अपने मकान में गई और चाँदी की थाली में दीपक जला लाई, इतने में तन्नाजी भी आ पहुंचा थाली उस के सिर पर से घुमा कर बलायें लेने लगी और खुले मस्तक से आशीर्वाद दिया कि बेटा! चिरञ्जीव हो. तन्नाजी ने पगड़ी उतर कर माईजी के पाँव पर रखदी और बोला कि 'जो आज्ञा हो, किया जाय सेवक उपस्थित है' बाईजी ने कहा कि मेरे वीर सरदार! इस बुढ़ापे में एक ही अभिलाषा शेष है और वह यह है कि 'सिंहगढ़ को

विजय किया जाय' क्यों कि दिल में इच्छा यह है कि शिवाजी और तन्नाजी जैसे सपूतों की माता कहा कर भी यदि यह किला हाथ न आया तो शोक रहेगा। तन्नाजी यह शब्द सुनते ही अपने स्थान पर लौट आया। चचा (शेलर) ने पूछा कि कहो कैसी हुई ? तन्नाजी ने उत्तर दिया कि चचाजी ! क्या हुआ माताजी जीत गईं और मैं हार गया। अब मैं तो सीधा सिंहगढ़ को जाता हूँ। शेलर बोला बहुत अच्छा आओ फिर अब खूब मिलकर भोजन करें।

कवि कहता है कि शिवाजी की माता ने स्वयं अपने सामने सम्पूर्ण सेना को भोजन खिलाया और तन्नाजी को पुरस्कार देकर विदा किया।

इस गीतके अनुसार तन्नाजी के साथ १२ सहस्र सिपाही थे परन्तु इतिहास लिखने वालों ने केवल १००० बताये हैं और यही ठीक प्रतीत होता है।

तन्नाजी ने अपनी सेना को नाना भागों में विभक्त कर दिया और कई रास्तों से नियत समय पर किले के नीचे पहुंचने की आज्ञा दी।

जब सारे किले के नीचे गये तो तन्नाजी ने एक चादर बिछाकर उस पर १० बीड़े पान के रख दिये और ललकार कर कहा कि कौनसा वीर अपने प्राणों को सङ्कट में डालकर किले में जासूसी करने के लिये जासकता है वह बीड़ा उठाये। यदि वह कृतकार्य होगया तो बड़ी भारी जागीर मिलेगी और मालामाल कर दिया जायगा परन्तु किसी को साहस न पड़ा कि बीड़ा उठाये। अन्त को तन्नाजी ने स्वयं बीड़ा उठाया और अपना वेष बदल कर विदा हुआ। नाना प्रकार की चा-लों और ढङ्गों से किले के अन्दर घुस गया और अत्यन्त सुर-

लित स्थान देख कर अपनी सेना में लौट आया। रस्सियों की एक सीढ़ी बनाई गई। तन्नाजी ने फिर पान के बीड़े चादर पर डाल कर कहा कि यदि कोई क्षत्रिय का बेटा है तो बीड़ा उठाये और रस्सी पकड़ कर ऊपर चढ़े। सब के सब इधर उधर देखने लगे किसी का साहस न पड़ा कि पान का बीड़ा उठा सके, तन्ना जी को अत्यन्त क्रोध आ गया मारे क्रोध के नेत्र लाल हो गये और कहने लगा कि "उठो शस्त्र उतार दो और स्त्रियों के लँहगे पहन कर घर का रास्ता लो" बस इतना कहना था कि मराठों के नेत्रों में खून भर आया और सब के सब आगे बढ़ने लगे। अन्त को तन्नाजी ने ५०० आदमी चुने और राजा शिवाजी की दुहाई देकर देवी का नाम लिया और ऊपर चढ़ना आरम्भ कर दिया। ५० तो चढ़ गये परन्तु अवशिष्ट मनुष्यों ने जब चढ़ना आरम्भ किया तो सब इकट्ठे ही चढ़ने लगे यहां तक कि रस्सी टूट गई और सब के सब पृथिवी पर गिर पड़े।

जब तन्नाजीको यह समाचार मिला तो उसे अत्यन्त खेद हुआ और कहने लगा कि न केवल रस्सी ही टूट गई प्रत्युत सच पूछो तो हमारे जीवन की लड़ी भी समाप्त होगई। चचा को सम्बोधन करके कहने लगा:—

चचाजी! मेरे लड़के को प्यार करना। चचा ने समझा कि भतीजे का दिल नर्म हो गया और वह फिर डराने लगा। ५०० मनुष्योंसे उदयभानु का मुकाबला करना व्यर्थ है उसके पास १८०० वीर हैं और नृशंसक चन्द्रावली हस्ती भी, इस प्रकार प्राण गवांने से क्या लाभ? तन्नाजी ने उत्तर दिया चचाजी! ऐसे डरपोकपने से सारे जीवन के कामों पर कलङ्क लगता है। क्षत्रिय का पीछे हटना धर्म नहीं जो हो सो हो।

इतिहास लेखक लिखते हैं कि तन्नाजी के साथ ऊपर ३०० मनुष्य चढ़े थे और शेष किसी कारण न चढ़ सके तन्नाजी अपने साथियों को लेकर आगे बढ़ा और जो मिलता गया उसको काटता गया। किले की तमाम सेना में हलचल मच गई मित्र व शत्रु का पहिचानना कठिन होगया। दोनों ओर से तलवारें खिच गई रक्त की धारा बहने लगी।

जिस सफ़ पै गिरी तेग़ सफ़ाई नज़र आई।
तुलकर जो पड़ी चोट सवाई नज़र आई ॥ १ ॥
ज़र्रों की बनावट में जुदाई नज़र आई।
न हाथ न बाज़ू न कलाई नज़र आई ॥ २ ॥
बाज़ू पै जो तड़फी न किसी दोश पै सर था।
पहलू पै जो चमकी तो न दिल था न जिगर था ॥३॥

उदयभानु मस्त होकर सो रहा था जब उसे आक्रमण का समाचार मिला तो बोला कि हाथी और उसके योद्धा· महावत को सामने कर दो। जब हाथी सामने आया महावत जो कि पठान था बड़े अहङ्कार में आकर बोला कौन है जो इस प्रकार किले में घुसकर शोर मचाता है।

तन्नाजी—"राजा शिवाजी का सेवक तन्नाजी सूबेदार" इस पर पठान को अत्यन्त क्रोध आया और कहने लगा :—

पठान—"अरे जाट चला जा, क्यों तेरी बुद्धि पर पत्थर पड़े हैं बाप और दादा जो काम करते आये वही तेरा काम है चलो हाथ में खुरपा लो और कंधे पर रस्सी तथा कम्बल डाल कर जङ्गल से घास लाओ और बनिये की दूकान पर बेचो ये शस्त्र तेरे लिये व्यर्थ हैं इनको फैंक दे।"

तन्नाजी—"अरे पँजे! क्यों अपने बाप दादा के काम पर बट्टा लगाता है जाओ और खेत से सन काट लाओ और उसके बोरिये बनाकर अपनी औरत को दो और कहो कि कुछ धान लाये ताकि वो उसके छिलकेसे रोटी बनाये और चावलों को निकाल कर बेचे। जाओ तलवार को रख दो, क्योंकि तुझे इसके पकड़ने का शऊर नहीं।

इस प्रकार परस्पर की वंश परम्परा का वर्णन करके दोनों वीर सामने हुए। पठान उन्मत्त हस्ती पर सवार था और मराठा अपने घोड़े पर। सब से पहला वार पठान ने किया जो ऐसा कड़े हाथों का था जो पत्थरको चीरकर पार निकल गया परन्तु तन्नाजी बच गया। पठान ने फिर दूसरा वार किया। परन्तु वह भी खाली गया अन्त को तन्नाजी घोड़े से उछला और हाथी के समीप आकर उसकी सूँड पर वार करने लगा हाथी घायल होकर गिर पड़ा साथ ही उसका महावत भी पृथिवी पर गिरा और चल दिया। इस प्रकार उदयभानु के सम्पूर्ण अफ़सर और उसके बेटे बारी २ से तन्नाजी के सामने आये और मारे गये। जब उदयभानु ने देखा कि कुछ पेश नहीं जाती तो क़िले की सम्पूर्ण रुई एवं तेल को निकलवा कर आग लगा दी। प्रकाश होजाने पर राजपूत को पता लगा कि तन्नाजी की सेना बहुत थोड़ी है। बस फिर क्या था शेर के समान गरजा और तन्नाजी के सामने आ डटा। तन्नाजी की तारीफ करके उसको फुसलाने लगा, तन्नाजी नमकहराम न था उसने तुर्की बतुर्की जबाब दिया। यदि लड़ाई का साहस नहीं तो शस्त्र छोड़ो और गले में पगड़ी डालकर मेरे साथ चलो मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि शिवाजी तुम से अच्छी तरह पेश आयगा इतनी वार्तालाप के पश्चात् दोनों ओर से वार होने लगे तन्नाजी खेत रहा अर्थात् मारा गया।

तन्नाजी को मारकर उदयभानु पीछे हटने लगा कि बस शेर मार लिया । तुम सब लोग बाकी सबका काम तमाम करो इतने में तन्नाजी का चचा शेलरजी तन्नाजीकी तलवार लेकर आगे बढ़ा और बोला कि कहाँ जाता है तन्नाजी मर गया तो क्या सारा महाराष्ट्र मर गया ज़रा सामने तो आ और देख मरे हुये सरदारकी तलवार क्या२ काम करती है। इतना कहते ही उदयभानु पर झपट पड़ा और उदयभानु शेलरके हाथ से मारा गया। राजपूतों की सारी सेना इकट्ठी होकर तन्नाजी के साथियों पर गिर पड़ी। इतने में तन्नाजी का भाई सबायाजी किसी न किसी प्रकार से अपने साथियों सहित किले में घुस आया और हर हर महादेव की ध्वनि से मरहठों का रक्त उबलने लगा। फिर क्या था ? राजपूत मराठे लड़े और खूब लड़े अन्त को मराठों की विजय हुई । बचेखुचे राजपूत किला छोड़ भाग गये। किला लेकर मराठों ने किले की छतसे तोपें चलाई जिससे कि शिवाजी को किले के मिल जाने का शुभ समाचार मिला परन्तु जिस समय यह पता लगा कि तन्नाजी मारा गया तो अत्यन्त चिन्तातुर हो कहने लगा कि हा शोक ! सिंहगढ़ तो हाथ आ गया परन्तु सिंह मारा गया ।

शिवाजी ने इस विजय की प्रसन्नता में अपनी प्रथा के विरुद्ध सम्पूर्ण सिपाहियों को चाँदी के पुरस्कार दिये. सबायाजी को इस किले का अध्यक्ष नियत किया जिसने कि एक मास के ही अन्दर पूर्णधर के किले को विजय कर लिया यह कार्य्यवाही मार्च सन् १६६७ में हुई ।

उधर कांगन में म्हाली किले के घेरे में मुरारपन्त को बहुत हानि उठानी पड़ी परन्तु अन्त को दो मास के पश्चात् किला हाथ आगया ।

वर्षाऋतु के समाप्त होते ही ३ अक्टूबर सन् १६७० को शिवाजी १५०० सिपाहियों के साथ सूरत पर जा पड़ा और तीन दिन तक उसे लूटता रहा। तीन दिन के पश्चात् वह अपनी सेना को लेकर सह्यारा के मार्ग से अपने इलाके को लौट गया। और जाता हुआ शहर वालों के नाम एक विज्ञापन दे गया, जिसका विषय यह था कि यदि तुम इस लूट से बचना चाहते हो तो १२००००० बारह लाख रुपया वार्षिक देना स्वीकार करो।

शिवाजी कुचन वंचन से अभी निकल ही रहा था। उसे पता लगा कि दाऊदखाँ ५००० की सेना से पीछा कर रहा है। जिस मार्ग से शिवाजी नासिक के पार जाना चाहता था उस मार्ग में दाऊदखाँ की सेना अवरोधक होगई।

शिवाजी ने अपनी सेना को चार भागों में विभक्त किया एक भागने आगे होकर लड़ाई आरम्भ की। बाकी दो भाग पीछे से ललकारते रहे और चौथा भाग जिसके पास कोष था चुपके से मुग़लिया सेना के बराबर को निकल कर अपने मार्ग में पड़ गया जहां से सीधा कांगन को चला गया। शिवाजी ने दाऊदखां का मुक़ाबला किया और उसको भगा दिया। शत्रु की सेना में मरहठों का समूह एक स्त्री के आधीन युद्ध कर रहा था। वह मरहटा स्त्री शिवाजी के हाथ पड़ गई शिवाजी ने बड़े आदर व सत्कार के साथ अच्छे पुरस्कारों सहित उसको अपने घर पहुंचा दिया।

दिसम्बर मास में प्रतापराव को आज्ञा मिली कि खानदेश पर धावा करे खानदेश का इलाका बड़ा आबाद और धनधान् था। प्रतापराव ने बड़े बड़े नगरों को निष्कंटक किया और मार्ग में ग्रामीणों से इस प्रकार के प्रतिज्ञापत्र लिखाये कि वे

प्रति वर्ष पैदावार का चतुर्थांश शिवाजी को दिया करेंगे, जिसके बदले में शिवाजी की ओर से उनके रक्षा करने की प्रतिज्ञायें हुईं। इस प्रकार से मुग़लों का सूबा खानदेश भी शिवाजी के अधीन हो गया। उधर जब औरङ्गजेब को यह समाचार मिला तो उसने राजा जसवन्तसिंह को लौटा दिया और ४०००० सेना के साथ महाबतखाँ को शिवाजी से सामना करने के लिये भेजा औरङ्गजेब को सन्देह था कि सुलतान मुअज्जम शिवाजी से मेल रखता है और इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि यदि सचमुच यह अवसर शिवाजी और जसवन्तसिंह जी के भी मध्य में हो तो भी जसवन्तसिंह जी ने शिवाजी को कष्ट देने के लिये उत्साह नहीं बढ़ाया।

महाबतखाँ ने दक्षिण में पहुँचकर तत्काल ही क़िलों को घेरना आरम्भ कर दिया परन्तु १६६२ की वर्षाऋतु तक औडा और पट्टा केवल दो ही क़िले वापिस ले सका। अन्त को सेना के दो भाग होगये। एक ने दिलेरखाँ की आज्ञानुसार चाकन पर धावा किया और दूसरे ने इख़लासखाँ के आज्ञानुसार साल्हेरा को जा घेरा। शिवाजी सल्हेरा को अपने हाथ से देना नहीं चाहता था इसलिये उसने प्रतापराव और पन्त दोनों को आज्ञा दी कि २०००० सेना से लड़ाई करें और क़िले को बचावें क्योंकि शिवाजी को यह समाचार मिल चुका था कि क़िलों में सामग्री काफ़ी नहीं है और क़िलों के पास पठानों ने २००० घोड़े काट डाले थे। प्रतापराव जब सेना को लेकर आगे बढ़ा तो उसने देखा कि इख़लासखाँ बड़े उत्साह व साहस से आक्रमण किये चला आता है। प्रतापराव ठहरगया और जिस समय इख़लासखाँ आगे बढ़ा तो प्रतापराव ने

भागना आरम्भ कर दिया। मराठों को भागना हुआ देखकर मुग़ल पीछा करने लगे और छिन्न भिन्न होगये बस फिर क्या था प्रतापराव जी ने उलटकर लड़ाई की मुग़लों पर अत्यन्त ही तबाही पड़ी। बहुत सी मार काट हुई २२ अफसर मारे गये और सहस्त्रों मनुष्य कट गये कई अध्यक्ष घायल हुए और पकड़े गये। इस महती विजय का फल यह हुआ कि मुग़लिया सेना सल्हारा के क़िले को छोड़ औरङ्गाबाद की ओर हट गई। इस वर्षाऋतु में शिवाजी छोटी २ विजय करता रहा ताकि सम्पूर्ण दक्षिण भर में एक ही राज्य होजाय। पुर्तगाल वालों से भी कई बार थोड़ा २ मुक़ाबला होता रहा जिसमें किसी पक्ष की हानि नहीं हुई। अङ्गरेज भी इस अवसर में प्रतिज्ञा विषयक पत्र व्यवहार करते रहे।

उधर मुग़लिया दरबार ने इख़लासख़ाँ की पराजय पर महावतख़ाँ और ख़ान मुअज़्ज़म दोनों को दक्षिण से बुला लिया और उसके स्थान पर ख़ानजहाँ दक्षिण का सूबेदार नियत किया गया। ख़ानजहाँ ने यह उचित समझा कि मराठों पर हमले न किये जांय। किंतु घाटों और मार्गों को रोक कर उन्हें तङ्ग किया जाय और मुग़लिया मण्डल को सुरक्षित किया जाय। तथा च उसने एक बहादुरगढ़ नामी क़िला बनाया परन्तु उसे यह क्या मालूम था कि मराठों को घाटों व दरों से आने की आवश्यकता नहीं क्योंकि वह इस देश की ईंट २ से परिचित से थे।

जहानख़ाँ जब इस प्रकार संलग्न था तो शिवाजी अवसर पाकर गोलकुंडा में जा निकला और वहां से बहुत सा माल व धन लाया। इस अवसर में पन्द्रह दिसम्बर सन् १६६८ को बीजापुराधीश अलीआदिलशाह की मृत्यु हो गई।

और इस के इलाके में बहुत अप्रबन्ध होगया इस अवसर पर शिवाजी ने बीजापुर की ओर धावा करने का इरादा कर लिया। तथा च मार्च सन् १६७३ में विशालगढ़ के पास एक बड़ी सेना एकत्रित की इस सेना के एक भाग ने पनाला के किले को लौटा लिया परन्तु वास्तविक इच्छा यह थी कि हुगलीनगर जो कि उन दिनों बड़ा धनाढ्य था लूटा जाय। इस नगर को लूटने से मराठों को इतना धन मिला कि इस से पहिले कभी नहीं मिला था। अङ्गरेज व्यापारियोंको भी इसमें बहुतसी हानि हुई। एक बार पहले भी राजापुर के स्थान पर लुट चुके थे। अब दूसरी बार हुगली में लुट गये।

शिवाजी ने अपने सामुद्रिक बेड़े से बीजापुर के उस मण्डल को तङ्ग करना आरम्भ किया जो समुद्र के तट पर था और भीतरी मण्डल में देशमुखों को राज-विद्रोह के लिये तैयार कर के मुसलमानी थाने उठवा दिये।

राजा बदनूरने भी हुगली लूट से भयभीत होकर शिवाजी को कर देना स्वीकार किया। मई मास से सेना के एक भाग ने 'परली' के किले को विजय किया और सितम्बरके आरम्भ में [illegible] भी प्राप्त हो गया और चन्दन पैंडूगढ़ तथा नन्दीगढ़ आदि किले भी सर हो गये। प्रतापराव ने अब्दुल-करीम बीजापुराध्यक्ष को इतना सताया कि उसे कुछ समय मांगना पड़ा और जिन शर्तों पर उसने सुलह की थी उन्हें शिवाजी ने पसन्द न किया और प्रतापराव से शिवाजी अप्रसन्न हो गया।

प्रतापराव इस अप्रसन्नता के कारण बरार पांदवाट के प्रान्तों को चला गया जिससे फिर अब्दुलकरीम को साहस

हुआ और उस ने बहुत सी सेना एकत्रित करके पनाला को फिर विजय करना चाहा।

फ़रवरी सन् १६४३ में यह धावा आरम्भ हुआ अब्दुलकरीमकी सेना क़िलेके पास पहुंचीही थी कि प्रतापराव अपनी सेना सहित आ निकला। मालूम होने पर शिवाजी ने प्रतापराव को लिख भेजा कि जब तक तू मुसलमानी सेना का विध्वंस करके बहुत सी लूट लेकर न आवेगा तब तक मैं तेरा मुख देखना नहीं चाहता। प्रतापराव ने इस अनादर को दूर करने के लिये एक महती सेना के साथ बीजापुर पर धावा कर दिया। यद्यपि बड़ी वीरता से लड़ा परन्तु मारा गया और उसकी सेना हताश होकर भागने लगी। मुसलमान सेना मराठा सेना की समाप्ति समझ कर पीछा करने लगी इतने में मुशाहजी मराठा पांच हज़ार सिपाही लेकर आन पड़ा और मुसलमानों को पीछा करने के स्थान प्राण बचाकर भागना पड़ा बेचारे अब्दुलकरीम को जीती हुई लड़ाई हारनी पड़ी और अपना सा मुँह लेकर बीजापुर चल दिया।

शिवाजी को प्रतापराव की मृत्यु से अत्यन्त खेद हुआ उसके बेटे को बहुत सी जागीर दी और उसकी बेटीसे अपने बेटे राजा का विवाह करके राज-वंश से सम्बन्ध कर दिया। मुशाहजी के काम से शिवाजी प्रसन्न हुआ और उसे हेमराव की पदवी दे कर अगुआ बनाया। इस प्रकार से लगभग सम्पूर्ण दक्षिण अपने हाथोंमें लेकर शिवाजी ने एक बड़ा यज्ञ रचा और जून सन् १६७४ तदनुसार १३ ज्येष्ठ संवत् १७३१ विक्रमी को सिंहासन पर बैठा अपना सिक्का तो चला ही चुका था अब संवत् भी जारी किया इस अवसरपर अङ्गरेजों से भी प्रतिज्ञायें की गईं। इस वर्ष उसके सिंहासनारूढ़ होने

के पन्द्रह दिन पश्चात् उसकी माता का भी देहान्त होगया अपने बेटे को सिंहासन पर बैठाकर लगभग सारे दक्षिण का शासक बनाकर एवं अपनी जाति को उच्च गौरव की सीढ़ी पर डाल कर जीजीबाई की आत्मा ने भी इस शरीर को छोड़ दिया। जिस शरीर से उसने शिवाजी को उत्पन्न किया था मानो उस का उद्देश्य समाप्त होगया। अब यह महान् आत्मा किसी नये काम के लिये शरीर को त्याग गया सन् १६७५ वा ७६ में भी मुग़लों से युद्ध रहा।

मुग़लों का अध्यक्ष यद्यपि साहस से काम करता रहा तथापि शिवाजी और हेमराव के साथ कुछ चारा न चला शिवाजी ने कई नये क़िले भी प्राप्त किये, हेमराव ने नरबदा एवं गोदावरी के पार जाकर मुग़लिया-मण्डलको निष्कण्टक किया शिवाजी ने 'मुनवर' और 'पनाला' की भूमि को स्वाधीन करके उसके रक्षार्थ कई एक क़िले बनाये।

कर्नाटक का धावा।

दक्षिण का संक्षिप्त इतिहास हमने भूमिका में लिखा था इसके पश्चात् शिवाजी का वृत्तान्त लिखते हुये हमने दर्शाया था कि शिवाजी ने कर्नाटक का मण्डल जीत लिया था और वही मण्डल बीजापुराधीश की ओर से उसे पुरस्कार में मिल गया था। सन् १६७६ तक हमने शिवाजी के कारनामों का वर्णन किया।

अब शिवाजी दक्षिण का एक बलवान् सम्राट् हो गया। अब शिवाजी को याद आया कि अपने पिताकी जायदादमें से उसे कुछ न मिला और दक्षिण में हिन्दू राज्य को सुदृढ़ करने के लिये अत्यावश्यक है कि समस्त दक्षिण इस राजधानी में

मिलाया जाय। इसलिये उसने पूर्वीय दक्षिण की ओर मुख किया। परन्तु पूर्व इसके कर्नाटक के वृत्तान्त लिखें हम यह दर्शाना उचित समझते हैं कि देहली, बीजापुर एवं गोलकुण्डा की क्या दशा थी औरङ्गज़ेब को सदैव यह शौक बना रहा कि सारा दक्षिण यवन राज्य में मिल जाय। चाहे छोटे२ रजवाड़ों का विध्वंस करना पड़े परन्तु दक्षिण अवश्य हाथ आवे। यदि औरङ्गज़ेब से सुलह करके बीजापुर एवं गोलकुण्डा ही ठीक रहते तो भी इसमें सन्देह न था कि सम्पूर्ण दक्षिण नाम मात्र से तो उसकी राजधानी में आजाता। अथवा औरङ्गज़ेब ही सच्चे हृदय से बीजापुर एवं गोलकुण्डे से मेल करके शिवाजी को आधीन करने का यत्न करता तो भी शायद कृतकार्य होजाता, परन्तु उसे तो यह इच्छा रही कि ये तीनों शक्तियां क्षीण हो जाँय और सारा दक्षिण यवनराज्य में मिल जाय। वह इन शक्तियों को एक दूसरे से लड़ाने आदि में अपनी बड़ी सफलता समझता था, जिसका फल यह हुआ कि किसी को भी उसकी बात अथवा नीति पर विश्वास न रहा ये तीनों राज्य जहाँ औरंगजेब का मुकाबला करते थे वहाँ परस्पर भी लड़ते झगड़ते रहते थे। इस झञ्झट में यदि चारों में से किसी ने लाभ उठाया तो वह केवल शिवाजी था सन् १६७२ में अलीआदिलशाह बीजापुराधीश मर गया उसका पुत्र अभी ५ वर्ष का बालक था। सबने मिलकर ख्वासखाँ को प्रबन्धकर्त्ता स्वीकार एवं नियत किया। परन्तु कुछ काल पीछे अब्दुलकरीम ने जो कि बीजापुर राज्य का एक मान्य पुरुष था और जिसने लोगों से मिल मिलाकर ख्वासखाँ को मरवा डाला था स्वयं उसका स्थान सँभाल लिया। यह महाशय दिलेरखाँ मुग़लिया सेनाध्यक्ष का सम्बन्धी था इसी लिये मुग़लिया राज्य से बिगाड़ना नहीं चाहता था। ख्वासखाँ इस

लिये मारा गया था कि उसने मुगलों की आधीनता स्वीकार करली थी और अलीआदिलशाह की पुत्री 'बादशाहबीबी' को औरंगजेब के पुत्र से विवाह देने की प्रतिज्ञा कर ली थी, इस लिये अब्दुलकरीम इस समय विचित्र शिकञ्जे में था भीतर से मुगलों का शत्रु था और ऊपर से दिलेरखाँ के कारण उनसे बिगाड़ लेने को भी साहस न था, उधर गोलकुण्डे में भी सन् १६७२ में कुतुबशाह के मरने पर कुछ २ अप्रबंध होगया उसका जमाई अबूहुसेन गद्दी पर बैठा परन्तु वास्तविक बल और सारा अधिकार मदनपन्त तथा खानापन्त दोनों ब्राह्मणों के हाथ में था शिवाजी ने इस अवसर को उत्तम जाना और कर्नाटक के धावे की तैयारियाँ करने लगा। याद रखना चाहिये कि शिवाजी का एक और भाई था जिसका नाम दुनकाजी था और वह अपने बाप की जागीर पर काबिज़ था। शाहजी के विश्वासपात्राधिकारियों में से रघुनाथनारायण नामी उसके पास था रघुनाथनारायण और राजा की परस्पर खटपट होगई कुछ काल तो वह गोलकुण्डा में अबूहुसेन के पास रहा और उसने मदनपन्त से सम्बध पैदा किया पश्चात् शिवाजी के पास चला आया। उसका एक भाई सोमन्त नामी शिवाजी के दरबार में प्रधान पद पर नियत था इसके अतिरिक्त शिवाजी जानता था कि उसका पिता रघुनाथ का सत्कार करता था और उसके वंश के पुराने एवं विश्वास-पात्र कर्मचारियों में से था शिवाजी ने रघुनाथनारायण का उचित सत्कार किया और उसे प्रधान वजीर की पदवी दी। इसने शिवाजी को सबसे पहले कर्नाटक की ओर जाने की सम्मति दी इस सम्मति से शिवाजी ने सब से पहले खानजहाँ से गाठी कुछ रुपया उसको भेंट किया और उससे

प्रतिज्ञा ली कि वह शिवाजी के राज्य पर हस्तक्षेप नहीं करेगा, फिर उसने अपने राज्य का प्रबंध किया, चुने २ कर्मचारियों को अच्छे २ स्थानों पर नियत करके सारा मण्डल मुरारपन्त के हवाले किया और सन् १६७१ के आरम्भ में दक्षिण की ओर कूच किया।

जब हैदराबाद समीप रह गया तो मदनपन्त स्वयं शिवाजी की अगवानीके वास्ते आया और बड़े आदर व सत्कारसे उसे अपनी राजधानी में ले गया। अन्त को शिवाजी और गोलकुण्डाधीश के मध्य में यह प्रतिज्ञा हुई कि कर्नाटक में जितनी भी शाहजी की जागीर है उसके अतिरिक्त जितनी भूमि शिवाजी के हाथ आये वह शिवाजी और गोलकुण्डा के बीच में बांट दी जाय और यदि बीजापुर का दरबार अब्दुलकरीम को निकाल कर उसके स्थान मदनपन्त के भाई को नियतकर दे तो उसको भी उसमें से कुछ भाग दिया जाय। हालां कि सारा कर्नाटक वास्तव में बीजापुर का था अपनी जागीर के बिना न तो कुछ शिवाजी का था और न गोलकुण्डाधीश का। ये भी परस्पर प्रतिज्ञा हुई कि दूसरों के मुकाबले में भी शिवाजी और गोलकुण्डाधीश एक दूसरे की सहायता करेंगे। इसप्रकार से यवन रजवाड़े गोलकुण्डा को दम देकर शिवाजी मार्च मास में कृष्णा नदी से पार उतरा कुछ दिन तो तीर्थयात्रा में लगाये और दानादि किया। तत्पश्चात् कर्नाटक में जा दाखिल हुआ। मई के प्रथम सप्ताह में मद्रास से निकला और गुन्जी प्रांत में पहुंचा, जो कि उस समय बीजापुर के अधीन था। अमीरखाँ के बेटों ने जो उस राज्य के शासक थे स्वयं ही अपना इलाका शिवाजी के हवाले कर दिया। शिवाजी ने वही महाराष्ट्र का शासन

और वहां प्रबन्ध आदि जारी करके रावानी का हवलदार नियत किया और आगे बढ़ा। बीजापुर के एक अधिकारी शेरखाँ ने पाँच हज़ार सिपाहियों से उसका मुकाबला किया परन्तु पराजित होकर कैद हो गया। इस अवसर में सेना के बाकी हिस्सों ने जिनको कि शिवाजी पीछे छोड़ आया था दिलौर पर धावा कर दिया। वह घेरा पांच दिसम्बर तक रहा अन्तको किला हाथ आगया। इधर शिवाजीने अपने भाई दुनकाजी से तरावड़ी के स्थान पर मुलाकात की, और यह अभिलाषा प्रकट की, कि दोनों भाई बडे उत्साह से मिलें। शिवाजी पिता की जायदाद में से आधा भाग मांगता था और दुनकाजी देता न था। निर्णय कुछ न हुआ और 'दुनकाजी' तनजौर को लौट गया शिवाजीकी सेना विजयपर विजय प्राप्त करती गई। शिवाजी लगातार अपने भाई को कहता गया कि उचित है कि सुलह करली जाय क्योंकि मैं भूमि की इच्छा से यहां नहीं आया हूँ किन्तु अपने पिता की दायाद को छोड़ना उचित नहीं समझता। 'दुनकाजी' ने कुछ न सुनी इस अवसर में शिवाजी ने शाहजी के सम्पूर्ण प्रान्तों पर अधिकार जमा लिया शिवाजी इन विजयों ही में संलग्न था कि उत्तरीय दक्षिणी दशाओं ने कुछ और ही पलटा खाया। औरङ्गजेब को जब यह समाचार मिला कि खानजहाँ ने शिवाजी से रुपया ले लिया है और शिवाजी ने गोलकुण्डा से मेल कर लिया है तो उसने खानजहां को वापिस बुला लिया और दिलेरखाँ को आज्ञा दी कि अब्दुलकरीम बीजापुरी के साथ मिलकर गोल-कुण्डे पर धावा करे।

मदनपन्त ने खूब वीरता से मुकाबला किया जिसका फल यह हुआ कि बीजापुर की सेना पराजित हुई। इस पराजयके

पश्चात् अब्दुलकरीम बीमार होगया और जनवरी सन् १६७० में मर गया, दिलेरखाँ ने मसऊदखाँ को उसके स्थान पर नियत किया, जिसने दिलेरखाँ को बहुत सा रुपया देने की प्रतिज्ञा की और यह भी कहा कि वह कभी शिवाजी से सुलह न करेगा। जब अब्दुलकरीम मर गया तो सेना का बहुत कुछ वेतन बाकी था और बहुत सी सेना इसी कारण से बन्द होगई।

शिवाजी को जब इन घटनाओं की खबर पहुंची तो रघुनाथनारायण और सेनापति भीमराव को कर्नाटक में छोड़ स्वयं लौट आया और मार्ग में भी विजय करता आया। कई क़िले उस समय भी उसको मिले जब 'तगु ल' पहुंचा तो पता लगा कि कर्नाटक में तुनकाजी ने उसकी सेना पर धावा कर दिया परन्तु बहुतसी हानि उठाकर पीछे हट गया। यह समाचार सुनकर शिवाजी ने तुनकाजी को एक पत्र लिखा, जिस में इस बात पर अफ़सोस किया कि तुम्हारे तरीके ने मुझे धावा करने के लिये विवश कर दिया। उसमें यह भी लिखा कि मुझे इन बहुमूल्य जातीय वीरों के खोये जाने पर अत्यन्त कष्ट है जो मेरी और तुम्हारी लड़ाई में मारे जा रहे हैं। हमें मेल करना चाहिए ताकि शत्रु पर विजय पा सकें। अन्त को इस चिट्ठी ने तुनकाजी का दिल पिघला दिया। इसके सिवा उसे यह भी परीक्षा हो चुकी थी कि शिवाजी से मुकाबला करना व्यर्थ है। उसका भाग्य चढ़ा हुआ है अन्त को पिता का धन एवं भूमि आदि देना स्वीकार कर लिया। इस प्रकार से विजयशील शिवाजी १८ मास के पश्चात् अपने रायगढ़ के किले में पहुंच गया। उधर तुनकाजी के साथ सुलह हो जाने से हंसराव वापिस चला और समीप पहुंचकर उसने जनार्दनपंत की सम्मति से बीजापुर की सेना पर धावा किया। इसमें

शत्रु की बहुत हानि हुई, पांच सौ घोड़े, पांच हाथी और शत्रु का सेना उनके हाथ आया। बेचारा बीजापुर न इधर का रहा न उधर का। मुग़लिया सहायता के भरोसे पर शिवाजी से लड़ाई आरम्भ की थी उधर मुग़लिया सेना की यह दशा हुई कि जिस समय औरङ्गज़ेब को सन्धि का समाचार पहुंचा जो कि दिलेरखां ने मसऊदखां से किया था तो उसने इस प्रबन्ध को अस्वीकार किया और दिलेरखाँ को आज्ञा दी कि वह बीजापुर की सेना को अवशिष्ट सेना देकर अधीन करले और बीजापुर पर राजकीय अधिकार जमाए अन्त को मसऊदखाँ शिवाजी से सहायता के लिये प्रार्थी हुआ शिवाजी बहुत सेना लेकर उसकी सहायता को बढ़ा इस धावे में शिवाजी ने दिल खोल कर मुग़लियामण्डल को लूटा; यहां तक कि लूटता २ गोदावरी पार निकल गया स्वयं सुलतान आज़म जिसको अभी सूबेदार दक्षिण नियत करके भेजा था औरङ्गाबाद में विद्यमान था उसके विद्यमान होने पर भी शिवाजी की सेना तीन दिन तक निश्चिन्त हो कर औरङ्गाबाद को लूटती रही; यहां तक कि उन्होंने अत्यन्त क्षुब्ध होकर मुसलमानों के स्थानों को भी न छोड़ा। शिवाजी के तमाम जीवन में यह पहला अवसर है कि जहां उसने एक धार्मिक पुजारी को कष्ट दिया, हम आगे चल कर मुसलमान इतिहासवेत्ताओं की साक्षी से सिद्ध करेंगे कि शिवाजी धार्मिक स्थानों को अत्यन्त पवित्र समझता था। इस प्रकार के कामों से मुग़लों को अत्यन्त क्रोध आया और चारों ओर से मुग़लिया सेना ने शिवाजी को घेर लिया शिवाजी का एक अफ़सर सैंदूजी मारा गया और उसकी सेनामें घबराहट फैल गई परन्तु समय पर धैर्य रखना शिवाजी जैसे वीरों का

का काम है शिवाजी ने अत्यन्त साहस से अपने प्राणों को संकटमें डालकर धावा किया और अपनी सेनाको दिखा दिया कि शिवाजी आवश्यकता के समय किस प्रकार से तलवार चला सकता है। फिर क्या था मराठों की तलवार बिजली के समान चमकने लगी और धुवाँधार होगया मराठे अपने सर्दार को लेकर मुग़लिया सेनाके बीचमेंसे निकल गये। परन्तु अभी बहुत दूर नहीं गये थे कि मुग़लिया ने एकत्रित होकर राजा किशनसिंह (जो राजा जयसिंहका पोता था) के आज्ञानुसार धावा किया; यहांतक कि फिर शत्रु ने चारों ओर से घेर लिया और शिवाजी का रास्ता बन्द हो गया। जब देखा कि इतनी बड़ी सेना से मुक़ाबला करना व्यर्थ है तो शिवाजी एक गुप्तचर को साथ लेकर एक दूसरे रास्ते से निकल गया जो कि मुग़लों को मालूम न था और वह कुशलता-पूर्वक पन्ना पहुँच गया वहां पहुँचकर उसे मसऊदखाँ का एक पत्र मिला जिस में लिखा था कि दिलेरखाँ क़िले की दीवारों के इतना समीप आगया है यदि सहायता न करोगे तो सब काम बिगड़ जायगा। शिवाजी इस चिट्ठीको पढ़कर फिर बीजापुरकी ओर प्रस्थित हुआ। अभी थोड़ीही दूर गया था कि समाचार मिला कि उसका बड़ा बेटा 'सम्भाजी' दिलेरखाँ से जा मिला। भीमरावको तो बीजापुरकी ओर भेजा और स्वयं सम्भाजीको लाने के लिये 'पनाला' की ओर आया। दिलेरखाँने अपनी सेना का एक भाग सम्भाजी को देकर उसे मराठोंका राजा प्रसिद्ध कर दिया और उसे भूपालगढ़ पर धावा करने के लिये आज्ञा दी जिस को उस ने ले लिया उधर हेमराव ने दिलेरखाँ को तङ्ग करना आरम्भ किया। अन्दर क़िलेवाले भी बड़े धैर्यसे डटे रहे हेमराव ने दिलेरखाँ के सामग्री पहुँचाने के साधनों को काट डाला और उसको इतना तङ्ग किया कि उसने लाचार होकर

किले को छोड़ तत्सम्बन्धी प्रान्तों को लूटना आरम्भ किया दिलेरखाँ कृष्णा पार होकर कर्नाटक को उजाड़ने में लगा था कि जनार्दन पन्त भी पहुँच गया और उस ने दिलेरखाँ पर धावा करके उसे परास्त कर दिया।

इतने में जब औरङ्गजेब को दिलेरखाँ के काम मालूम हुये तो उसने सुलतान मुअज्जम और दिलेरखाँ दोनोंको बुलालिया और उनकी जगह खानजहां का सूबेदार नियत करके भेजा सम्भाजी के विषय में औरङ्गजेब ने यह आज्ञा दी कि उसको कैद करके दरबार में भेजा जाय। परन्तु सम्भाजी किसी न किसी प्रकार से भाग निकला और शिवाजी के हाथ आगया जिसने कि उसको पनालाके किलेमें कैद करदिया ताकि कैदमें उसका जोश शान्त हो जाय और अपने किये पर लज्जित हो।

"मृत्यु"

सन् १६८० शुरू हो गया शिवाजी बीजापुर के दरबार में अहद करने में संलग्न है सम्पूर्ण विजित भूमि अपने पिता की जागीर तथा तंजौर, गोपाल व बिलारी आदि प्रान्तों का स्वामी है, बीजापुराधीश ने लाचार होकर स्वीकार कर लिया कि यह सम्पूर्ण राज्य शिवाजी का समझा जाय। शिवाजी इन तमाम विजयों से आनन्द में मग्न है। उसको क्या मालूम कि उस के जीवन की घड़ी सम्पूर्ण हो चुकी उसकी आत्मा अपने काम समाप्त कर चुकी, अब उसको इस शरीर के छोड़ने की इच्छा है शिवाजी अभी राज्य-प्रबन्ध के ही चिन्तन में था कि मार्च सन् १६८० के अन्तिम दिनों में उस के घुटनों में सूजन पैदा हो गई यहां तक कि ज्वर भी आना आरम्भ हो गया जिस से कि सात दिन में ही शिवाजी इस संसार से कूंच कर गया शिवाजी की आत्माने १५ अप्रैल सन् १६८० को इस शरीर को छोड़ा सच है मृत्यु सब से बलवान् है वह

मनुष्य जो लगभग ४० वर्ष तक भारतवर्ष के कई एक बादशाहों शूरवीरों और जवान मर्दों से लड़ता रहा, जिस ने लाखों मनुष्यों का मुकाबला किया जिसने साहस के सामने पर्वत, नाला, नदी, समुद्र, चोटी व घाटी, जंगल, शेर व हाथी आदि कुछ न समझा था वह अब क्षण भर में मृत्यु का ग्रास हुआ। बीमारी ने उसे सात दिन में ही ऐसा लाचार कर दिया कि उसकी आत्मा को वह शरीर छोड़ना पड़ा जिस शरीर से उसने बड़े बड़े काम किये थे जिनसे कि भारत का इतिहास भर रहा है अफ़सोस कि वह शिवाजी अपनी थोड़ी ही सी अवस्था में कूँच कर गया और अपने देशियों को अपने से विमुक्त कर गया, कुछ आश्चर्य न था कि शिवाजी कुछ और दिन जीता रहता तो यवन-राज्य की इमारत को और भी ठोकर लगाता परन्तु मृत्यु किसी आवश्यकीय कार्य्य की प्रतीक्षा नहीं करती जगत् में यदि कोई ऐसा समय है कि जिससे किञ्चित मात्र भी समय नहीं मिल सकता तो वह मृत्यु का समय है शिवाजी के इस अवस्था में मर जाने का उसकी जाति को जितना भी शोक हो थोड़ा है।

शिवाजी का चालचलन।

शिवाजी मर गया और मरना सच है परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि शिवाजी जैसी महान् आत्मायें बहुत कम होती हैं। ऐसा लड़ाका, ऐसा वीर और शत्रु के मुकाबले में निर्दयी जिसने जातीय स्वतन्त्रता की लड़ाई में सहस्रों घर बेचिराग़ कर दिये सैकड़ों ग्राम उजाड़ दिये, सैकड़ों माताओं को निस्सन्तान, सैकड़ों स्त्रियों को विधवा, कई एक बच्चों को अनाथ कर दिया, जिसने शत्रु से बदला लेने के लिये धोके और चालबाज़ी से भी काम लिया, ऐसा मनुष्य और उसके

प्राइवेट जीवन पर दृष्टि डालो तो चकित हो जाओगे। सच है इस प्रकार की अवस्थाओं को देखकर ही मनुष्य कह उठता है कि वह मनुष्य नहीं किन्तु अवतार है उसके देशी भाइयों ने भी उस की इन विचित्र शक्तियों के प्रभाव से उसे अवतार बना दिया।

विचारणीय स्थल है कि शिवाजीने अपना जीवन कहां से आरम्भ किया और कहां समाप्त किया। जिस समय शिवाजी उत्पन्न हुआ था उसका पिता क्या था और जब उन्नीसवें वर्ष में पहिला धावा किया था तो क्या था और जब वह मरा तो क्या होगया। बड़े २ इतिहासवेत्ताओं ने उस की वीरता और साहस की प्रशंसा की है। औरंगजेब के ऐसे निर्दयी समय में उत्पन्न होकर आर्यजाति के गौरव को जीता करदेना शिवाजी का ही काम था अपने नौकर और संबन्धियों से प्रेमपूर्वक बर्त्ताव रखता था मरने से कुछ दिन पहले उसे समाचार मिला कि "तुकाजी उत्साह को छोड़ बैठा है सम्पूर्ण कार्य छोड़ वैराग्य धारण कर लिया है"। यह सुन शिवाजी ने एक पत्र लिखा जिसका विषय यह था "प्यारे भाई! बहुत दिन हुए तुम्हारा पता नहीं मिला चित्त उदास है 'रघुपन्त' के पत्र से ज्ञात हुआ कि तुम बहुत उदास हो और अपने शरीर की परवाह नहीं करते, तुम्हारी सेना सुस्त पड़ गई है परन्तु तुम्हें कुछ परवाह नहीं लोगों को सन्देह है कि तुम वैरागी न हो जाओ मैं हैरान हूँ कि तुम अपने पिता के सच्चे दृष्टान्त को क्यों भूल गये चिरकाल उनके साथ रहे और उनकी संगति से लाभ उठाया।

विदित हो कि उन्होंने कैसी गम्भीरता व वीरता से कठिनाइयों का सामना करते हुये बड़े २ कार्य्य किये और नाम पैदा किया सदैव अपने आपको भयङ्कर आपत्तियों से

बचाया तुमको उनकी विद्वत्ता एवं गम्भीरता से लाभ उठाने के अनेक अवसर मिलते रहे तथा च मुझको भी जैसा अवसर मिला मैंने भी उनका यथाशक्य अनुसरण किया और एक राज्य की बुनियाद डाली मैं नहीं समझता कि आप ने क्यों सब राज-कार्यों को छोड़ कर समय के ऊपर वैराग्य धारण कर लिया ! यह वैरागीपन आपको शोभित नहीं होता जो कि आपने राजकार्य तथा कोषादि ऐसे मनुष्यों के हाथमें दे दिये और समय पड़े पर सब को पचा जायँ क्या तुम को यह उचित है कि वैराग्य धारण करके अपनी शारीरिक अवस्था का नाश करदो यह कैसी बुद्धिमत्ता है और इसका क्या फल होगा मै तुम्हारा बड़ा हूं मेरी तरफ़ से तो कुछ न कुछ डर होना चाहिये । बस उठो निद्रा को त्यागो और वैरागी होनेका विचार मनसे बिलकुल हटादो, अधीरता एवं शोक को दूर कर दो, अपने नित्य कर्मों में चित्त लगाओ, अपनी शारीरिक अवस्था का ध्यान करो और आराम की इच्छा करो । अपनी प्रजा की रक्षा करो अपने सैनिकों पर अधिकार जमाओ और अपने सब प्रकार के कामों को बड़ी बुद्धिमत्ता से करो एवं अपने कर्मचारियों से यथायोग्य कार्य लेते हुये संसार में यश पैदा करो जब ऐसा होगा तो सच जानिये कि आपकी कीर्ति एवं साहस को सुन कर मेरा चित्त शान्त होगा । आप की इस दशाको देखते हुये मेरा चित्त महान् दुःख-सागर में डूबा हुआ है, इस वास्ते उठो ! कमर बाँधो, अपनी अवस्था पर ध्यान दो और मेरे चित्त के दुःख को दूर करो, यह आयु आप के वास्ते वैराग्य धारण के लिये नहीं वरन् बड़े बड़े काम करके यश पैदा करने के लिये है । हां वृद्धावस्था का समय तो वैराग्य धारण करने का होता है परन्तु आपने अभी ही से धारण

कर लिया न मालूम आप ने कौन से काम कर लिये हैं जो कि आप अभी ही से शान्त हुये जाते हैं देखें आप क्या करके दिखाते हैं।

यह शिक्षा शिवाजी ने अत्यन्त शुद्ध भाव एवं सच्चे हृदयसे की थी। एक बार उसके बेटेने एक ब्राह्मण की लड़की के ऊपर कुदृष्टि डाली पिता को खबर मिली तत्काल अपने प्यारे पुत्रको भी पकड़कर कैद कर लिया और उसपर पहरा बिठा दिया, इस ही नाराजी के कारण सम्भाजी दिलेरखाँ से जा मिला थी। शत्रु की स्त्रियाँ जब उस को मिलीं तो उन के साथ यथायोग्य बर्ताव से पेश आया और आदर के सहित उन को उन ही के घर भिजवा दिया। शिवाजी दूसरेके मतसे विरोध न रखता था। खानखां अपनी पुस्तक के दूसरे भागमें पृष्ठ ११० पर लिखता है कि शिवाजी का आम नियम था कि कोई मनुष्य मस्जिदों को हानि न पहुंचाय, औरतों को न छेड़े एवं मुसलमानों के धर्म की हँसी न करे तथा च उस को जब कभी कहीं कुरआन हाथ आता तो किसी न किसी मुसलमान को दे देता था। औरतों का अत्यन्त आदर करता था और उनको उनके रिश्तेदारों में पहुँचा देता था अगर कोई लड़की हाथ आती तो उसके बापके पास भिजवा देता। लूट-खसोट में गरीबों और काश्तकारों की रक्षा करता था। गौ और ब्राह्मणों के लिये तो वह एक देवता था। यद्यपि बहुत से मनुष्य उसको लालची बताते हैं परन्तु उसके जीवन के कामों के देखने से विदित हो जाता है कि वह जुल्म और अन्याय से धन कमा कर इकट्ठा करना अत्यन्त नीच काम समझता था, यद्यपि शत्रु के धन को वा शत्रु के राज्य से दौलत लूटने को अच्छा समझता था चुनाँचि दिलेरखाँ उस के राज्य से

बहुत सा माल व धन लूटकर ले चला था शिवाजी को खबर मिली तत्काल उसका पीछा किया और माल वापिस लाकर मालिकों को दे दिया।

शिवाजीकी सफलता उसकी वीरता पर निर्भर है और वह बुद्धिमान् ऐसा था कि मानो जादूका पुतलाथा जो मनुष्य एक वार उसके हाथ आगया वह कभी रुष्ट होकर नहीं गया। शत्रु की सेनासे उसको अनेकबार हिन्दू व मुसलमान मिले परन्तु उसकी सेनासे सम्भाजी को छोड़ और कोई शत्रुके साथ नहीं मिला। शिवाजी अपने धर्मपर अत्यन्त दृढ़ था रामायण महाभारत इत्यादि ऐतिहासिक व धर्म सम्बन्धी पुस्तकोंके अवलोकन व श्रवण करने का अधिक प्रेमी था जो कि कभी २ युद्धस्थल सेही कथा श्रवण करने को चला जाता था जहां कहीं दस बीस कोस पर धर्म-चर्चा एवं मत मतान्तरों के शास्त्रार्थ होते थे वहां अवश्य ही पहुँचता था पूजा और नित्यकर्म में सदैव संलग्न रहता था।

पिछले पृष्ठोंमें शिवाजीका राज्यशासन और उसकी वीरता एवं दिलेरी का वर्णन कर चुके हैं पूर्व इसके कि हम शिवाजी के जीवन के संक्षिप्त इतिहास को समाप्त करें हम उचित समझते हैं कि कुछ उसके शासन का भी दिग्दर्शन कराएँ जिससे मालूम हो कि राज्य-प्रबन्धमें कैसे उत्तम दिमाग़ और बुद्धिका आदमीथा यहभी मालूम होकि शिवाजी न केवल उत्तम दर्जेका सिपाहीही था किन्तु नीतिज्ञ तथा राजशासक भी एकही था।

शिवाजी का राज्य-प्रबन्ध।

शिवाजीने राज्य-प्रबन्ध के लिये एक राजसभा बनाई रखी थी जिस के आठ सभासद् थे जिस का नाम अष्टप्रधान था आठ राजविभागोंके उत्तम २ प्रबन्धकर्त्ता उसके सभासद् थे।

१-पेशवाजी राजमन्त्री था और राजा से उतरकर रियासतका सबसे उत्तम पदवीयुक्त था। यह ओहदेदार दरबारमें राजसिंहासन से नीचे दाईं ओर अव्वलमें जगह रखता था।

२-सेनापति अर्थात् सिपहसालार सेना का उत्तम ओहदेदार था और दरबार में बाईं ओर दूसरे नम्बर पर बैठता था। गवर्नमेंट आफ़ इण्डिया के कमाण्डर-इन-चीफ़ की जगह रखता था।

३-मजमुआनपत कोषाध्यक्ष जो कि महामन्त्री से नीचे बैठता था।

४-सचवानपत एकोन्टेन्ट अर्थात् कोष निरीक्षक या मुनासिबे आला जो नम्बर तीन में बैठता था।

५-मन्त्री जो राजा का प्राइवेट सेक्रेटरी था।

६-सोमन्त जो फ़ारन सेक्रेटरी का दर्जा था अर्थात् शीरेमुल्क यह ओहदेदार सेनापति के नीचे बाईं ओर बैठता था।

७-पं० राव जो राजा का मुख्य पंडित था शास्त्रों में उसकी व्यवस्था प्रमाणित समझी जाती थी।

८-उससे बाईं ओर न्यायधीश इनमें से कोई ओहदेदार सदा के वास्ते नियत नहीं रहता था।

शिवाजी का सम्पूर्ण इलाका दो प्रकार का था, यानी पहाड़ी और मैदान था। इलाके मैदान भिन्न भिन्न प्रान्तों यानी सूबों में बँटा हुआ था। शिवाजी के राज्य में एक और भी रीति थी वह यह थी कि जो इलाका बराहेरास्त था उसकी अमलदारी में था वह शिवाजिया कहलाता था और वह इलाका जो मुग़लों के अधीन था मगर उसका चतुर्थांश दिया करता था वह मुग़लिया कहलाता था।

जहाँ सिर्फ चतुर्थांशसे सम्बन्ध था वहां वह सिर्फ मालगुज़ारी का प्रबन्ध रखता था और बाकी इन्तज़ाम से कुछ

रास्ता न था शिवाजी के पास २८० किले थे प्रथम हम उसके किलों का इन्तज़ाम बतायेंगे, हर एक किले के प्रधान अफ़सर का नाम हवलदार था और उसके नीचे किले की दीवार के हर एक हिस्से के नाम से उसके असिस्टेन्ट थे इसके सिवा एक ब्राह्मण क्लर्क किले में रहता था।

और एक कर्मचारी प्रबन्ध के लिये था ज़िले और सम्पत्ति सम्बन्धी प्रबन्ध एक ब्राह्मण के सुपुर्द था। सैनिक तथा रसद आदि का प्रबन्ध कमसरियट वाले कर्मचारी के आधीन था। किले के चारों ओर सफ़ाई आदि के नियम नियन्त्रित थे, और वन का प्रबन्ध भी उत्तम था।

मैदान का मण्डल जैसे कि हमने पूर्व वर्णन किया कईएक प्रान्तों में विभक्त था सामान्यतया प्रत्येक प्रान्त की आमदनी एक अथवा सवालाख के लगभग थी। प्रत्येक सूबेदार का वेतन १०० के लगभग होता था। कर-प्राप्ति आदि का प्रबन्ध ग्रामीणों एवं ग्रामाध्यक्षों के सुपुर्द होता था अङ्गरेज़ी सरकार के समान पृथिवी का नाप सम्पूर्ण कागज़ों में लिखा रहता था, दुर्भिक्ष आदि के समय में तकावी दी जाती थी और क़िस्तों से कर लिया जाता था। दीवानी अभियोग ग्रामों की पञ्चायतों के सुपुर्द होते थे।

फ़ौजदारी का काम सूबेदार किया करते थे हिसाब किताब नितान्त स्वच्छ और उत्तम था। वर्ष की समाप्ति पर जांच हुआ करती थी बक़ाया निकाली जाया करती थी। जो कुछ भी राज्य की ओर निकलता तत्काल दे दिया जाता था।

पैदल सेना में १० सिपाहियों पर एक नायक नियत था ५ नायकों परएक हवलदार नियत था। दो हवलदारों पर

एक सहास्तक नामी अध्यक्ष तथा सात अध्यक्षों पर जमादार था १० जमादारों पर एक अधिकारी था। ये अधिकारी दो प्रकार के थे। १-बारगीरदार २-सत ज़िलेदार। एक के पास राजकीय घोड़ा और दूसरे के पास अपना होता था। प्रत्येक उच्च सेनाध्यक्ष के पास एक एक क्लर्क रहता था प्रत्येक को वेतन नक़द मिलता था। शिक्षा के लिये मन्दिरों तथा पाठशालाओं एवं पण्डितों के नाम जागीर होती थी। शिवाजी उत्पन्न हुआ तो दक्षिण में संस्कृत का प्रचार बहुत कम था। परन्तु शिवाजी के उत्साह एवं पुरुषार्थ से अधिक हो गया शिवाजी के समय में दशहरा का समारम्भ उत्तमतया मनाया जाता था। इस अवसर पर प्रत्येक सिपाही की सम्पत्ति की एक सूची बनाई जाया करती थी यदि किसी की कुछ कमी हो जाती तो राज की ओर से पूरी की जाती थी। परन्तु लूट में से किसी को कुछ रखना नहीं होता था। शिवाजी की रक्षा एवं गुप्त प्रबन्ध अत्यन्त उत्तम था। उसे प्रत्येक स्थान के समाचार सबसे पहले और सच्चे सच्चे मिल जाया करते थे शत्रु के सेना सम्बन्धी समाचार पूर्ण प्रकार से मिल जाया करते थे। रास्तों अथवा दर्रों पर बराबर कर्मचारी नियत थे जो क्षण २ का समाचार देते रहते थे। सम्पूर्ण इतिहासवेत्ता सहमत हैं कि शिवाजी के प्रबन्ध में किसी प्रकार की घूँस (रिशवत) आदि नहीं ली जाती थी क्योंकि शिवाजी न्यायी एवं विचारशील था।

इति शम्।